एकता अखण्डता की तस्वीरें

व्यथित हृदय

समर्पण

उन्हे
जो एकता और अखण्डता की स्थापना मे
प्राणोत्सर्ग की कामना रखते हैं ।

शरद जोशी
जन्म 21 मई 1931 उज्जैन (म ''^)

दो शब्द

आज हमारे देश को एकता और अखण्डता की सबसे अधिक आवश्यकता है। इन्ही से देश की स्वतत्रता सुरक्षित रह सकती है और देश उचित रूप मे विकास की ओर भी अग्रसर हो सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की कहानिया एकता और अखण्डता को ही आधार मानकर लिखी गई है। कुछ ऐतिहासिक हैं और कुछ कल्पित। जो कल्पित है सत्य का अश उनमे भी है। हमारा विश्वास है कि यदि इन कहानियो का प्रचार किया जाय तो एकता और अखण्डता की स्थापना मे विशेष सहायता मिल सकती है। आशा है, जो लोग शासन और शिक्षा के क्षेत्र मे हैं, वे इन कहानियो के प्रचार मे योग देगे।

—श्री व्यथितहृदय

क्रम

धरती रोई	६
पत्थर वाला	१५
प्रेम का बलिदान	२४
नई मसजिद	३२
लाजवन्ती	३६
देव-मंदिर के लिए भूमि	४५
विशाखा की अर्थी	५०
बेगम और कुरान	५५
शेख तकी	६०
जोई राम, सोई रहीम	६७
जोई कृष्ण, सोई करीम	७२
सत्य का चमत्कार	७७
अरण्या	८२
प्रायश्चित्त	८७
फूल एक ही किस्मे जुदा-जुदा हैं	६२
भोला भगत का मंदिर	६६
चन्दन	१००
चौकीदार	१०६

शरद जोशी

जन्म

रात का समय था। गगन मंडल में शरद ऋतु का चन्द्रमा हँस रहा था। चारों ओर स्वच्छता थी, मौन छाया था। ऐसा लग रहा था, मानो ब्रह्मांड की वीणा का तार ही टूट गया हो।

संन्यासी आनन्द अपनी कुटिया में मृग-चर्म पर आसीन थे, विचारों की तरंगों में डूबे हुए थे। निशा जब आती है, तो सारा जगत मौन हो जाता है, प्रभात आते ही पुन उसका मौन टूट जाता है। मनुष्य के सोने और जागने की यह क्रिया अनादि काल से होती चली आ रही है—अनन्त काल तक होती चली जायगी।

संन्यासी आनन्द घूमने के उद्देश्य से कुटिया से बाहर निकल पड़े। मन्द मन्द गति से कुटिया के सामने ही पदचारण करने लगे।

संन्यासी आनन्द सहसा रुक गये। ध्यानपूर्वक कुछ सुनने का प्रयत्न करने लगे। दूर से किसी का करुण स्वर आ रहा था—

"माधव, अब न द्रवहु केहि लेखे।"

स्वर में पीड़ा थी, दर्द था। ऐसा लग रहा था, मानो गायक रात के सन्नाटे में अपनी पीड़ा और अपनी व्यथा से ब्रह्मांड को भर देना चाहता हो।

संन्यासी आनन्द कुछ क्षणों तक उस स्वर को सुनते रहे, फिर मन्द मन्द गति से स्वर की दिशा की ओर चल पड़े। उस स्वर

शरद जोशी

जन्म 21 मई 1931

उनके हृदय को ही नही, उनके प्राणा को भी खसकर बाध लिया था।

कुछ दूर पर सरिता का तट था। दोनो किनारो मे बधा हुआ सरिता का जल धीरे-धीरे बहता जा रहा था। ऐसा लग रहा था, जैसे उस स्वर ने जल की गति को भी बाध लिया हो। सन्यासी आनन्द कई बार रात मे सरिता के जल प्रवाह को देख चुके थे, पर आज जैसी उदासीनता उन्होने उसमे कभी नही देखी थी।

सन्यासी आनन्द ने विस्मयपूण नेत्रो से देखा, कुछ दूर पर शिलाखण्ड पर एक नारी मूर्ति आसीन है, जो व्यथामिश्रित स्वरो मे गा रही है—

"माधव, अब न द्रवहु केहि लेखे।"

सन्यासी आनन्द धीरे-धीरे चलकर नारी मूर्ति के पास जाकर खडे हो गये, निर्निमेष नेत्रो से उसकी ओर देखने लगे।

नारी मूर्ति लाल वस्त्र धारण किये हुए थी, गौर उसका वण था। केश खुले हुए थे जो लाल रग के थे। ऐसा लग रहा था, मानो केशा को रक्तिम रग मे रग दिया गया हो।

सन्यासी आनन्द कुछ क्षणो तक नारी मूर्ति की ओर देखते रहे, फिर बोल उठे—'देवि! तुम कौन हो, इस सन्नाटे मे अपनी पीडाभरी रागिनी से ब्रह्माड को क्यो कपा रही हो?"

नारी-मूर्ति ने कोई उत्तर नही दिया। वह निश्चल भाव से करुणा का सागर बहाती रही, और बहाती रही।

सन्यासी आनन्द पुन बोल उठे—"मा, बताओ तुम कौन हो? तुम अपने स्वरो मे प्राणो को गला गला कर क्या बहा रही हो?"

नारी-मूर्ति ने सन्यासी आनन्द की ओर देखा और बडे जोर से अट्टहास करते हुए कहा—"मा, मा!! क्यो मा कहकर मेरा

उपहास करते हो ? तुम्हारी ही तरह मेरे कोटि-कोटि पुत्र है। वे भी मुझे मा कहते है। पर कोई भी मेरी व्यथा को नही समझता, मेरे दैन्य के मर्म को नही जानता। देख रहे हो न मेरे वस्त्रो और केशो को। वे रक्त मे रगे हुए है। जानते हो, इन्हे रक्त मे किसने रगा है ?—तुम्हारे ही समान मुझे मा कहकर पुकारने वाले लोगो ने, मेरे कहे जाने वाले पुत्रो ने।"

नारी मूर्ति का मुख-मडल लाल हो उठा। सन्यासी आनन्द विस्मित होकर नारी मूर्ति की ओर देखने लगे, रह-रह कर देखने लगे।

नारी-मूर्ति क्षोभ से भरे हुए स्वरो मे पुन बोल उठी—"जिसके पुत्र हिंसा की आग जलाकर आपस मे ही एक-दूसरे का गला काट रहे हो, जिसके आत्मज ईश्वर और धर्म के नाम पर रक्त बहा रहे हो, और जिसकी सताने आठ-आठ वर्ष की बालिकाओ के साथ बलात्कार कर रही हो, वह मा रोये नही तो क्या करे ? वह अपनी व्यथा की रागिनी से ब्रह्माड को कपाये नही तो क्या करे ?"

नारी मूर्ति कहते-कहते मौन हो गई। कुछ क्षणो तक सोचती रही, फिर आवेग से भरे स्वर मे बोल उठी—"मैं धरती हू। एक बार द्वापर मे मैं रोई थी, आज फिर मैं रो रही हू। उस बार जब मैं रोई थी, तो मेरे आसुओ को पोछने के लिए स्वय सर्वेश्वर ने जन्म लिया था। उन्होने मेरे आसुओ को सुखाने के लिए ही महाभारत की आग जलाकर सारे पाप-कर्मियो को राख के रूप मे परिणत कर दिया था। उन्हे फिर आना पडेगा, क्योकि आज फिर मेरी छाती फटी जा रही है। मुझमे बल नही रहा कि अब मैं अपने पुत्रो के पापो के भार को सभाल सकू। मेरे आसुओ से सर्वेश्वर को फिर आना पडेगा, फिर उन्हे महाभारत की आग जलाकर पापियो को भस्म करना होगा।"

शरद जोशी

जन्म 21 मई 1931 उज्जैन (म

सन्यासी आनद नारी मूर्ति के सामने झुक गये। उन्होने विनीत स्वर मे कहा—"क्षमा करो मा, क्षमा करो। अपने आसुओ को अपने ही आचल से पोछ लो। तुम्हारे आसू ब्रह्माड को कपा देंगे, सर्वेश्वर को सीमा मे बधने के लिए विवश कर देंगे।"

नारी मूर्ति ने दीर्घ नि श्वास लेते हुए कहा—"मेरे क्षमा करने से क्या होगा ? क्या हिंसा की आग बुझ जायेगी ? चारो ओर से गोलियो की आवाज़ आ रही है, चारो ओर बमो का धुआ दिखाई पड रहा है। चारो ओर निरपराधो की हत्याए हो रही है। मेरे क्षमा करने से क्या यह सब बन्द हो जायेगा ? नही, सर्वेश्वर को सीमा मे बधना ही होगा। महाभारत की आग जलानी ही होगी। यदि तुम मेरे सच्चे पुत्र हो, तो सर्वेश्वर को बुलाने मे मेरा साथ दो, मेरे स्वर मे स्वर मिलाकर गाओ—

"माधव, अब न द्रवहु केहि लेखे।"

सन्यासी आनन्द दोनो हाथ जोडकर धरती के चरणो पर गिर पडे, बोले—"मा, मैं तुम्हारे स्वर मे स्वर मिलाकर गाऊगा। सर्वेश्वर को बुलाने मे अपने प्राणो की बलि दे दूगा। मा, तुम्हारे रक्त से रगे हुए वस्त्र मुझसे देखे नही जा रहे हैं। मैं तुम्हारे वस्त्रो को धवल बनाने के लिए अपनी आहुति दे दूगा।"

नारी मूर्ति धरती ने अपना दाहिना हाथ ऊपर उठा दिया। सन्यासी आनन्द ने विस्मयपूर्वक देखा, नारी मूर्ति धरती शिलाखड से ऊपर उठ रही है—ऊपर।

सन्यासी आनन्द चकित विस्मित दृष्टि से नारी मूर्ति की ओर देखने लगे। नारी मूर्ति धीरे धीरे ऊपर उठकर आकाश मे विलीन हो गई। सन्यासी आनन्द चीत्कार कर उठे—"मा, मा!"

आकाश मडल मे स्वर गूज उठा—"मा को चाहते हो, तो प्राणो को गलाकर करुण स्वर मे गाओ—"माधव, अब न द्रवहु केहि लेखे ? हिंसा को बन्द करो। रक्त बहाना छोडो। जीवित

रहो, और दूसरो को जीवित रहने दो।"

सन्यासी आनन्द अपनी कुटिया मे लौट गये। दूसरे दिन वे अपनी कुटिया उजाड कर गली-गली मे घूमने लगे, घूम-घूम कर गाने लगे—"माधव, अब न द्रवहु केहि लेखे। हिंसा की आग मत जलाओ, रक्त मत बहाओ। स्वयम् जीवित रहो, दूसरो को जीवित रहने दो।"

सन्यासी आनन्द के स्वर मे अद्भुत आकर्षण था। लाख-लाख स्त्री पुरुष उनके पीछे चलने लगे, उनके साथ मा की जय-ध्वनि बोलने लगे।

प्रभात का समय था। सन्यासी आनन्द धरती का सदेश मनुष्यो की भीड को सुना रहे थे—"धरती मा रक्त से रग उठी है। उसके रुदन से ब्रह्माड काप उठा है। मनुष्यो, होश मे आओ। हिंसा छोडो, ईश्वर और धर्म के नाम पर रक्त न बहाओ। स्वयम् जीवित रहो, दूसरो को भी जीवित रहने दो।"

सहसा गोलियो के चलने की आवाज सुनाई पडी। भीड के स्त्री और पुरुषो ने देखा, सन्यासी आनन्द धरती पर पडे हैं। उनकी छाती से रक्त के फौवारे छूट रहे हैं।

भीड के स्त्री-पुरुष सन्यासी आनन्द को उठाने लगे। उनकी छाती के रक्त को पोछने लगे।

भीड ने अत्यधिक आश्चर्य के साथ किसी का स्वर सुना—"अपने कलुषित हाथो से मेरे पुत्र का स्पर्श मत करो। तुम सब के सब अधम हो, हत्यारे हो। मैंने तुम्हारे लिए अणुबम की सृष्टि कर दी है। शीघ्र ही तुम्हारे पापो से महाभारत की आग जलेगी। तुम सब उस आग मे पतगे की तरह जल कर भस्म हो जाओगे।"

भीड के स्त्री-पुरुषो को उस स्वर के साथ ही साथ भयानक अट्टहास भी सुनाई पडा।

शरद जोशी

स्त्री-पुरुष भयभीत हो उठे। एक-दूसरे से पूछने लगे—यह किसका स्वर है, किसकी हंसी है ?

मैं कह रहा हूं—यह धरती मां का स्वर है, धरती मां का अट्टहास है। अब भी समय है, चेत जाओ। मानव से दानव मत बनो। ईश्वर और धर्म के नाम पर रक्त न बहाओ, स्वयं जीवित रहो, और दूसरों को जीवित रहने दो।

पत्थर बोला

शीत के दिन थे और रात का समय था। मैं लिहाफ मे लिपटा हुआ कमरे मे अकेला चारपाई पर सो रहा था। विजली जल रही थी। सहसा मेरी नीद खुल गई। मुझे ऐसा लगा, जसे कोई सिसक-सिमक कर रो रहा है। मैं मुख के ऊपर से लिहाफ उठाकर इधर-उधर देखने लगा, पर कमरे मे तो कोई नही था। मैं चकित होकर सोचने लगा—कमरे मे तो कोई नही है। फिर निकट मे ही सिसकने की आवाज कहा से आ रही है? कौन है, जो वटी ही वेदना के साथ सिसक रहा है?

मेरे रोगटे खडे हो गए। मैं चुपचाप सिसकने की उस आवाज को सुनने लगा। जब सिसकने की आवाज़ वन्द नही हुई, तो मैं भीतर साहस बटोरकर बोल उठा—"कौन हो भाई, क्यो सिसक रहे हो? एकान्त मे सिसककर मेरे मन मे भय का उद्रेक क्यो कर रहे हो? यदि मैं तुम्हारे कुछ काम आ सकता हू, तो कहो?"

कोई वडे ही करुण स्वर मे बोल उठा—"डरो नहीं, म खिडकी पर रखा हुआ पत्थर का टुकडा हू, अपनी व्यथा से पीडित होकर सिसक रहा हू।"

मुझे स्मरण हो आया, खिडकी पर पत्थर का एक छोटा-सा टुकडा रखा हुआ है। कुछ दिन हुए मैंने उसे एक टूटे हुए प्राचीन बौद्ध मदिर से लाकर रख दिया था। पत्थर वहुत पुराना था, शीत, वर्षा और गर्मी से काला पड गया था। सोचा था, किसी

शरद जोशी

सग्रहालय मे दे दगा।

आवाज को सुनकर मैं बोल उठा—"तुम खिडकी पर रखे हुए पत्थर के टुकडे हो ? तुम पत्थर के टुकडे बोल रहे हो ? आज तक तो किसी पत्थर के टुकडे को बोलते देखने की कौन कहे, उसके सम्बन्ध मे कभी सुना तक नही था। आश्चर्य है, महान आश्चय है!"

फिर आवाज आई—"हा, आश्चय तो है, पर असम्भव नही है। मैं खिडकी पर रखा हुआ पत्थर का टुकडा ही बोल रहा हू।"

मैं विचारो की लहरो मे डूबा हुआ था। पत्थर के टुकडे की बात सुनकर सोचता-सोचता बोल उठा—"ठीक है, तुम पत्थर के टुकडे ही बोल रहे हो, पर तुम्हे कौन-सी व्यथा है, जिसकी पीडा से तुम सिसक सिसक कर रो रहे हो?"

पत्थर का टुकडा बोला—"मैं वतमान और अतीत की घटनाओ को याद कर करके रो रहा हू। वतमान मे जो कुछ हो रहा है, उसे तो तुम प्रतिदिन देखा करते हो। चारो ओर हत्याए, चारो ओर खून, चारो ओर डकैतिया, चारो ओर पाप और चारो ओर भ्रष्टाचार। वायुमडल विषाक्त धुए से भर गया है। सास लेने मे भी कठिनाई होती है। मैं पूछता हू, क्या तुम्हे साम लेने मे कठिनाई नही होती ?"

मैं कुछ उत्तर नही दे पाया। देता भी तो क्या देता ? बात सच थी—चारो ओर गोलियो की बौछार, बमो का विस्फोट और निरपराधो की हत्याए! मैं मूक-सा बन गया।

पत्थर का टुकडा कुछ क्षणो तक चुप रहकर पुन बोला—"तुम मेरी बात का उत्तर नही दे सकोगे। मैं जानता हू, तुम्हारा भी दम पाप के धुए से घुट रहा है, क्योकि तुम एक सहृदय और वास्तविक ईश्वरानुरागी मानव हो। मनुष्य जब वतमान से पीडित होता है, तो उसे अतीत की याद आ ही जाती है। मुझे भी अपने अतीत

को याद आ गई है। सुनोगे मेरे अतीत की कहानी। हो सकता है, तुम यह कहो कि अतीत की कहानी सुनकर क्या करूंगा, पर नहीं, अतीत की कहानी सुनने से तुम्हें लाभ होगा, तुम्हारा कल्याण होगा। तुम हिंसा और पाप से अपने को पृथक् करके मानवता के मार्ग पर चल सकोगे, अपने आपको समझ सकोगे।"

पत्थर का टुकड़ा कहते-कहते मौन हो गया। मैं कुछ उत्तर न दे सका। देता भी तो क्या देता? पत्थर के टुकड़े के स्वरों ने मेरे कंठ को ही नहीं, मेरे प्राणों को भी जकड़ लिया था।

कुछ क्षणों तक मौन रहने के पश्चात् पत्थर का टुकड़ा पुन: बोला—"तुम्हारा मौन! तुम अवश्य मेरे अतीत की कहानी सुनना चाहते हो। तो सुनो, मेरे अतीत की कहानी—

"ढाई हज़ार वर्ष पूर्व की बात है। मैं एक बौद्ध मंदिर के उस चबूतरे में लगा हुआ था, जिस पर गौतम बुद्ध बैठकर लाखों मनुष्यों को अहिंसा, सचाई और प्रेम का संदेश दिया करते थे। मैंने गौतम बुद्ध को देखा है, उनकी अमृत वाणियों को भी सुना है। मैं उनकी पवित्र गाथाओं को जानता हूं। उन्हीं में से एक गाथा तुम्हें सुना रहा हूं—

दुर्भिक्ष का दानव मुंह फैलाकर चारों ओर दौड़ रहा था। गांव-के-गांव उजड़ गए थे, नगर-के-नगर वीरान हो गए थे। दिन में ही शृगाल और भेड़िये बस्तियों में घुस जाते थे, भूख की पीड़ा से मरे हुए मनुष्यों को घसीटकर जंगलों में उठा ले जाते थे।

चारों ओर रुदन, हाहाकार और चीत्कार। गौतम बुद्ध की आत्मा विकल हो उठी। वे हाथ में पात्र लेकर अकाल-पीड़ितों के लिए गली-गली में घूमकर भिक्षा मांगने लगे।

एक पहर दिन चढ़ चुका था। गौतम बुद्ध चबूतरे पर बैठे हुए थे, स्त्री पुरुषों से करुणाभरे स्वरों में कह रहे थे -

अकाल का दानव बस्तियों को उजाड़ रहा है, नगरों को

शरद जोशी

बना रहा है। स्त्री-पुरुष और बच्चे भूख मे दम तोड रहे है। तुम उनकी सहायता करो। वे तुम्हारे ही भाई हैं, तुम्हारे ही प्रतिरूप है।"

गौतम बुद्ध की वाणी सभी स्त्री-पुरुषो ने सुनी, पर किसी ने भी अपने बटुए से कुछ निकालकर उनके सामने नही रखा। किसी गृहपति ने उठकर कहा—देव, क्या करू ? विवश हू। व्यापार मे बडा घाटा हो गया है। और किसी ने उठकर कहा—देव, आज-कल काम-काज बहुत मन्दा चल रहा है। देना तो चाहता हू, पर पास मे कुछ है ही नही।

गौतम बुद्ध मौन थे, विचारो मे डूबे हुए थे। सहसा मदिर के द्वार पर एक रथ आकर रुक गया। रथ से नीचे उतरकर एक तरुणी सुन्दरी मदिर मे प्रवेश करने लगी। उसे देखकर बैठे हुए स्त्री-पुरुष बोल उठे—"आम्रपाली, वेश्या आम्रपाली ! आम्रपाली मदिर मे ?"

बैठे हुए स्त्री-पुरुष उठने लगे। उठ-उठकर खडे होने लगे। सबके मुख से एक साथ ही निकल पडा—"आम्रपाली मदिर मे ! वह तो वेश्या है, पापिनी है।" गौतम बुद्ध बोल उठे—"आम्रपाली को देखकर क्यो खडे हो गए गृहपतियो ! आम्रपाली अग्नि की कोई ज्वाला तो है नही, जो तुम सबको जलाकर भस्म कर देगी। वह भी एक मनुष्य है, एक नारी है। गृहपतियो, गगा की शीतल जलधारा अग्नि की ज्वाला से सूख नही जाती। सच तो यह है कि उससे अग्नि की ज्वाला बुझ जाती है, शान्त हो जाती है।"

एक साथ बहुत से कठो से स्वर निकल पडा—'वह वेश्या है देव, पापिनी है। वह हमारे मध्य मे नही आ सकती, हम स्पर्श नही कर सकती।"

गौतम बोल उठे—"मानता हू गृहपतियो, आम्रपाली वेश्या

है, पापिनी है, पर यह तो बताओ गृहपतियो, तुममे से ऐसा कौन मनुष्य है, जिसने कभी पाप न किया हो। तुममे और आम्रपाली मे केवल इतना ही अन्तर है कि तुम अपने पाप को चतुराई मे छिपाकर रखते हो और आम्रपाली अपने पाप का ढिंढोरा पीटती हुई घूमती है।"

गौतम की वाणी से स्त्री-पुरुष मूक बन गए। क्योकि बात सच थी। कोई भी ऐसा नही था, जिसने कभी पाप न किया हो, जो पाप करने के पश्चात् उसे चतुराई से छिपाकर न रखता हो।

आम्रपाली वैशाली की प्रमुख वेश्या थी। बडे-बडे गृहपति, सेठ और नृपति उसके प्यार की घूट पीने के लिए तृषित रहा करते थे। वह बौद्ध मदिर मे गौतम का दर्शन करने आई थी। अकाल-पीडितो के लिए कुछ दान देने आई थी।

आम्रपाली चुपचाप खडी थी। गौतम बुद्ध ने उसकी ओर देखते हुए कहा—"आम्रपाली, खडी क्यो हो? बैठ जाओ, इनकी घृणा से डरो नही।"

आम्रपाली गौतम बद्ध के सामने झुक गई। उसने उनकी ओर देखते हुए विनीत स्वर मे कहा—"देव, मैंने सुना है, आप अकाल-पीडितो की सहायता के लिए भिक्षा की याचना कर रहे हैं।"

गौतम बुद्ध ने उत्तर दिया—"हा आम्रपाली, मैं अकाल-पीडितो की सहायता के लिए भिक्षा की याचना कर रहा हू। मैने इन गृहपतियो को इसीलिए तो बुलाया था, पर इनमे से कोई भी कुछ न दे सका। कोई कहता है, व्यापार मे घाटा हो गया है, कोई कहता है, काम काज ढीला चल रहा है। तुम क्या कहती हो आम्रपाली?"

आम्रपाली ने उत्तर दिया—"देव, मेरे पास जो कुछ है, वह सब आप का है, पर देव ।"

आम्रपाली रुक गई। गौतम बुद्ध बोल उठे—"पर क्या

आम्रपाली, कहते-कहते रुक क्यो गई ? कहो, क्या कहना चाहती हो ?"

आम्रपाली ने बहुत ही मंद स्वर मे कहा—'पर देव, आप को मेरे द्वार पर आना होगा, मेरे घर के भीतर मेरे हाथ का बना हुआ भोजन स्वीकार करना होगा।"

गौतम बुद्ध बोल उठे—"यह कौन सी बडी बात है आम्र पाली ? मैं जब सब के द्वार पर जाता हू, तो तुम्हारे द्वार पर क्यो नही आऊगा ? आम्रपाली, कल प्रात एक पहर दिन बीते मैं तुम्हारे द्वार पर आऊगा। तुम्हारे घर के भीतर तुम्हारे हाथ का बना हुआ भोजन ग्रहण करूगा।"

आम्रपाली जिस प्रकार आई थी, उसी प्रकार रथ पर बैठकर चली गई।

सारा मदिर स्त्री-पुरुषो के रव से गूज उठा—"गौतम बुद्ध कल नर्तकी आम्रपाली के द्वार पर जाएगे, उसके हाथ का बना हुआ भोजन ग्रहण करेंगे।"

गौतम बुद्ध हिमालय की तरह निश्चल थे, अटल थे।

दूसरे दिन का प्रात काल। लगभग एक पहर दिन बीत चुका था। गौतम बुद्ध हाथ मे पात्र लेकर आम्रपाली के द्वार पर जा कर उपस्थित हुए। उनका सिर घुटा हुआ था। वे काषाय वस्त्र धारण किये हुए थे। मुख मडल बालारुण की तरह ज्योतित था।

आम्रपाली खिडकी पर बैठकर गौतम बुद्ध की प्रतीक्षा कर रही थी। वह उन्हे देखते ही सीढियो से उतरकर नीचे आई और उनका हाथ पकडकर घर के भीतर ले गई। कमरे मे फूलो की शैया पहले से ही बिछी हुई थी। आम्रपाली उसकी ओर सकेत करती हुई बोली—"देव, यह आप ही के लिए है। बैठिये, इस पर।"

गौतम बुद्ध ने फूलो की शैया की ओर देखा। मुस्करा उठे।

उन्होंने मुस्कराते हुए कहा —"आम्रपाली, बडी सुन्दर शैया है, पर यह मेरे लिए नही है। मैं तो अपने पास पात्र और चीवर को छोड कर और कुछ नहीं रखता।"

गौतम बुद्ध पालथी लगाकर धरती पर बैठ गये। आम्रपाली चकित विस्मित दृष्टि से उनकी ओर देखने लगी, रह-रह कर देखने लगी।

गौतम बुद्ध बोल उठे—"क्या देख रही हो आम्रपाली, खाना नही खिलाओगी ?"

आम्रपाली ने स्वर्ण पात्र मे खाना लाकर रख दिया। जल से भरा हुआ गिलास भी स्वर्ण ही का था।

गौतम बुद्ध ने एक बार भोजन पदार्थ और पात्र की ओर देखा, फिर कहा—"आम्रपाली, यह सोने का पात्र मेरे लिए नही है। मेरा पात्र तो मेरी हथेली है।"

गौतम बुद्ध ने भोजन के पदार्थ हथेली पर लेकर खाये और अजलि से ही जल का पान किया।

आम्रपाली चुपचाप खडी देखती रही। गौतम बुद्ध जब जल पी चुके तो आम्रपाली बोली—"देव, शैया पर शयन कीजिए। मुझे पैरो का दबाने का अवसर दीजिए।"

गौतम बुद्ध मुस्करा उठे। उन्होंने मुस्कराते हुए कहा—"अभी नही आम्रपाली ! समय आने दो मैं तुम्हे पैरो को दबाने का अवसर दूगा। लाओ, भिक्षा मे क्या दे रही हो ?"

आम्रपाली ने अपने समस्त रत्नजटित आभूषण और सारी मुद्राए गौतम बुद्ध के चरणो के पास रख दी। उसने बहुत से पुरुष देखे थे, पर उसकी सुन्दरता को ठुकराने वाला गौतम बुद्ध के समान पुरुष आज प्रथम बार उसने देखा था।

गौतम बुद्ध आम्रपाली के समस्त आभूषण और मुद्राए लेकर चले गये।

आम्रपाली उसी दिन घर द्वार छोडकर सन्यासिनी बन गई। एक झोपडी मे रहकर भिक्षा की याचना करने लगी।

सध्या का समय था। आम्रपाली सन्यासिनी के वेश मे गौतम बुद्ध के सामने उपस्थित हुई। उसके वस्त्र फटे हुए थे। उसका पात्र टूट गया था। उसके मस्तक से रक्त बह रहा था। वह भिक्षा मागने के लिए बस्ती मे गई थी, पर बस्ती के लोगो ने उसे भिक्षा न देकर उसके कपडे फाड डाले, उसके पात्र को तोड दिया और उस पर ककडो की वर्षा की।

गौतम बुद्ध ने आम्रपाली की ओर देखा और मदुल वाणी मे कहा—"क्या बात है आम्रपाली ? आज तुमने यह कैसा सुदर वेश बना रखा है ?"

गौतम बुद्ध आसन से उठ पडे। वे अपने चीवर से उसके मस्तक का रक्त पोछने लगे। उन्होन रक्त पोछते-पोछते कहा—"आम्रपाली, मैंने कहा था न समय आने दो, मैं तुम्हे अपने पैरो को दबाने का अवसर दूगा। आम्रपाली, जो मनुष्य अपने हृदय से विकारो को निकाल देता है, जो हिंसा, द्रोह और ईर्ष्या को छोड देता है, वही मेरे पैरो को दबा सकता है। तुम्हारे लिए वह अवसर उपस्थित हो गया है आम्रपाली !"

गौतम बुद्ध जमीन पर लेट गये, आम्रपाली बडी श्रद्धा से उनके पैरो को दबाने लगी, दबाने लगी।

बस्ती मे खबर गूज गई। लाख-लाख स्त्री-पुरुष दौड पडे। उन्होंने देखा बुद्ध भगवान जमीन पर लेटे हुए है। वेश्या आम्रपाली उनके पैरो को श्रद्धापूर्वक दबा रही है। स्त्री-पुरुष आम्रपाली के भाग्य की सराहना करने लगे, पर जानते हो आम्रपाली के भाग्य का चद्रमा कैसे उदित हुआ ? विकारो को छोडने से, हिंसा को छोडने से, सब को अपना समझने से और क्रोध का परित्याग करने से।"

पत्थर कहते-कहते चुप हो गया। कुछ क्षणो तक चुप रहकर दीघ नि श्वास लेता हुआ बोला—"काश फिर गौतम बुद्ध धरती पर आते, फिर आम्रपाली आती। काश आज के लोग गौतम बुद्ध को समझते उनके उपदेशो को ग्रहण करते।"

पत्थर मौन हो गया। मैं बडी देर तक गौतम बुद्ध की गाथा पर विचार करता रहा, विचार करता रहा।

शरद जोशी

प्रेम का बलिदान

जाडे के दिन थे, रात का समय। बफ पड रही थी। शीत ऐमा पड रहा था कि गम दुलाई के भीतर भी हृदय हिलता जा रहा था, प्राण कापते जा रहे थे।

जमील गर्म दुलाई मे लिपटा हुआ चारपाई पर पडा था पर प्रयत्न करने पर भी नीद नही आ रही थी। झपकी लगती थी, पर ठड से टूट जाती थी। अचानक जमील का ध्यान अशया की ओर चला गया। अशया उसकी छोटी वहन थी। उम्र लगभग ६०-६५ वष की थी।

जमील पडे-पडे अशया के वारे मे सोचने लगा। अशया का देखे हुए बहुत दिन हो गए थे। बचपन मे साथ-साथ खेलती थी, खाती थी, वडे प्यार से भाईजान कहकर पुकारती थी, पर शादी के बाद पराई हो गई। लडकियो की भी कैसी अजीब जिन्दगी होती है। शादी के बाद ही मा-बाप, भाई-बहन—सव पराये हो जाते है। बचपन मे कभी सोचा तक नही था कि अशया विलग हो जाएगी, पर शादी के बाद विलग हुई, तो बिल्कुल भूल-सी गई। बस एक-दो बार देखा था, उसके बाद तो उसकी सूरत गूलर का फूल बन गई। बेचारी ३० साल की उम्र मे ही वेवा हो गई। एक लडका था, जमाल। १५ वर्ष की उम्र मे एक बार उसे देखा था। अब तो वह पूरा जवान बन गया होगा। न जाने कौन सा काम-काज करता होगा। अशया की जिदगी कैसे बीत रही होगी, कसे ?

जमील के विचार-क्रम बीच ही मे टूट गए। अचानक दरवाजे की जंजीर खटखटा उठी थी।

जमील लेटे-लेटे ही बोल उठा—"कौन हो भाई ?"

पर किसी ने कुछ जवाब नही दिया। जंजीर बजती रही—खट खट, खट-खट।

जमील ने उठकर दरवाजा खोल दिया। सामने ही २४-२५ वर्ष का एक युवक खडा था। युवक दरवाजा बन्द करता हुआ बोल उठा—"मामूजान, जल्दी कही छिपा लीजिए। पुलिस ने मेरा पीछा किया है।"

मामूजान! कौन है यह जवान? कही अशया का बेटा जमाल तो नही है? आठ-नौ साल पहले उसे एक बार देखा था। इस जवान की सूरत पहचानी-सी लगती है—जमील एक क्षण मे ही सोच गया।

जमील सोचता हुआ बोल उठा—"कौन हो तुम? अशया के बेटे जमाल तो नही हो?"

युवक ने उत्तर दिया—"मैं जमाल ही हू मामू! मेहरबानी करके जल्दी छिपा दीजिए। बात-चीत फिर बाद मे करूगा।"

जमील सोचने लगा। उसने सोचते-सोचते कहा—"पर कमरे मे तो कोई जगह है नही। तुम्हे छिपाऊ तो कहा छिपाऊ?'

जमाल चुप था। जमील सोचने लगा। एक क्षण के बाद पुन बोला—"अच्छा, एक काम करो। यह दूसरी चारपाई है न! सिर से पैर तक दुलाई तानकर उसी पर सो जाओ।"

जमाल बोला—"पर इससे क्या होगा मामू? कही पकडा गया तो?"

जमील ने विश्वास के साथ जवाब दिया—"नही पकडे जाओगे। दुलाई ओढ के पड जाओ। जिम्मा मेरा है।"

जमाल दूसरी चारपाई पर सिर से पैर तक दुलाई ओढकर

शरद जोशी

चुपचाप पड गया।

अभी दस पन्द्रह ही मिनट वीते होगे कि जजीर फिर वज उठी—खट खट, खट खट।

ज़मील ने दरवाजा खोल दिया। सामने ही खुफिया विभाग का इन्सपेक्टर इरशाद खडा था, टार्च लिए हुए था। कमरे के भीतर प्रवेश करता हुआ बोला—"ज़मील साहब, आपके कमरे मे कोई तस्कर तो नही आया है? वडा खौफनाक आदमी है। पाकिस्तान से पिस्तौलो और वन्दूको की तस्करी करता है। आतकवादियो के हाथ वेचता है।"

जमील की आखे आश्चय से फैल गई। वह सोचने लगा, सोचता हुआ वोला—"मेरे कमरे मे तस्कर क्यो आने लगा इरशाद साहव? सारी दुनिया जानती है, मैं खुफिया विभाग का पेंशनर आदमी हू।"

इरशाद इधर उधर देखता हुआ बोला—"हा, यह वात तो है, पर वह तस्कर इसी ओर भागता हुआ आया था। मैं दूर से उसका पीछा कर रहा था।"

ज़मील ने कुछ जवाव नही दिया। इरशाद इधर-उधर देखता हुआ फिर वोला—"ज़मील साहव, दूसरी चारपाई पर यह कौन सो रहा है?"

ज़मील ने जवाव दिया—"यह मेरी वीवी है। पेट के दद से परेशान है। अभी अभी सोई है, मेहरवानी करके उसे जगाइए नही।"

इरशाद सोचने लगा। उसने सोचते-सोचते कहा—"माफ कीजिएगा ज़मील साहव, मैंने सर्दी मे आपको तकलीफ दी।"

ज़मील वोल उठा—"कोई वात नही इसपेक्टर साहव, कोई वात नही। इसी वहाने आप मेरे कमरे मे तो आए।"

इसपेक्टर हाथ मिलाकर चला गया। ज़मील दरवाज़ा वन्द

करके फिर चारपाई पर पड गया, जमाल के बारे मे सोचने लगा, रह रहकर सोचने लगा।

इसपेक्टर के जाने के बाद जमाल उठकर खडा हो गया, बोला—"मामूजान, बडा शुक्रगुजार हू। आज आपने मुझे गिरफ्तार होने से बचा लिया। मैं आपके इस अहसान को कभी नही भूलगा। इजाज़त दीजिए। मैं अब जाऊगा।"

जमील आश्चर्यचकित हो उठा। उसे विश्वास नही था कि जमाल इतनी जल्दी उसके कमरे से जाने को कहेगा। वह बोल उठा—"जाओगे ? इतनी जल्दी कहा जाओगे ? अभी-अभी तो इसपेक्टर गया है। रास्ते मे पकड लिए जाओ तो ?"

जमाल बोला—"नही पकडा जाऊगा मामू ! इसपेक्टर मेरी खोज मे बस के अड्डे पर गया होगा। वहा से हवाई अड्डे पर जाएगा। तब तक मैं अपने ठिकाने पर पहुच जाऊगा।"

"अपने ठिकाने !"—जमील ने विस्मयभरे स्वर मे कहा—"कहा है तुम्हारा ठिकाना ?"

जमाल ने उत्तर दिया—"पीर साहब की दरगाह मे मौलवी साहब के घर।"

जमील ने फिर कुछ नही पूछा। जमाल उसे आदाब-अर्ज़ करके चला गया।

जमील दरवाज़ा बन्द करके दुलाई ओढकर फिर चारपाई पर लेट गया। उसे कब नीद आ गई—कुछ कहा नहीं जा सकता, पर जब नीद आ गई तो सपनो की दुनिया मे विचरण करने लगा।

बस्ती पर आतकवादियो ने पिस्तौलो और बन्दूको से हमला कर दिया है। घर जल रहे हैं, स्त्री-पुरुष और बच्चो की हत्याए हो रही हैं। चीख पुकार और रुदन मे वायुमडल गूज उठा है। गोलियो की आवाज़ से मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी भी भागे जा रहे हैं, व्याकुल होकर शोर मचा रहे हैं।

शरद जोशी

जमील की नींद खुल गई। उसकी सासें जोर जोर से चलने लगी। वह हाफता हुआ अपने आप ही बोल उठा—"देश को दो टुकडो मे बाटने का षड्यन्त्र करने वाले आतंकवादी! ओह खुदा, यह कैसा खौफनाक स्वप्न था!"

जमील करवट बदलकर सोचने लगा—"कही यह स्वप्न सच न हो जाय! कही सचमुच आतंकवादी बस्ती पर हमला न कर दें, पर इसका दायित्व किस पर है? जमाल पर, जमाल ही तो पाकिस्तान से पिस्तौलो और बन्दूको की तस्करी करता है। वही तो आतंकवादियो के हाथा पिस्तौलें और बन्दूकें बेचता है। वह देशद्रोही है। उसे तो गिरफ्तार करा देना चाहिए, पर नहीं ।"

जमील के विचारा के तंतु टूट गए। वह कुछ क्षणों तक मौन रहा। फिर करवट बदलकर सोचने लगा—"पर नहीं, वह मेरी प्यारी बहन अशया का बेटा है। उसकी गिरफ्तारी से उसे गम होगा। उसका कलेजा टूक टूक हो जाएगा। मैं उसके गमगीन चेहरे को कैसे देखूगा? मैं जमाल को गिरफ्तार नही करा सकता। आतंकवादी हमला करते हैं तो करने दो, हिंदुस्तान बटता है तो बटने दो। मुझे हिंदुस्तान और हिन्दुओ से क्या वास्ता? मैं तो मुसलमान हू। जमाल मेरा भाजा है और मुसलमान भी है। एक मुसलमान एक मुसलमान को कैसे गिरफ्तार करा सकता है?"

जमील सोच ही रहा था कि बाहर बिल्ली बोल उठी—"म्याऊ म्याऊ।"

जमील की विचारधारा का रुख बदल गया। वह करवट बदल कर फिर सोचने लगा। "पर नहो, यह तो मुझे बिल्ली भी चिढा रही है। यदि मैंने जमाल को गिरफ्तार नही कराया, तो बिल्ली ही नहीं, मुझे श्रृगाल और भेडिये भी चिढाएगे। यदि मैंने प्यारे देश हिंदुस्तान के साथ दगा किया, तो मुझे दोजख मे भी

जगह नही मिलेगी। हिन्दुस्तान मे हिन्दू ही नही रहते, मुसलमान भी रहते हैं। यदि आतकवादियो ने हमला किया, तो हिन्दू ही नही मरेंगे मुसलमान भी मरेंगे, मदिर ही नही ढहेगे, मस्जिदें भी ढहेगी। हिन्दू औरते ही बेवा नही बनेंगी मुसलमान औरते भी बेवा बनेंगी। जमाल कोई भी हो, मुझे उसे गिरफ्तार करा देना चाहिए। सब मे बडा देश है, मजहब, घर द्वार और मा-बाप तथा भाई-बहन नही। देश के साथ दगा करना खुदा के साथ दगा करना है।"

जमील करवट बदल कर सोने का प्रयत्न करने लगा, पर उसे नीद नही आई। नीद भी आती तो कैसे आती ? उसका मन तो विचारो के द्वद्व मे जकडा हुआ था।

सवेरा हो चुका था। सूर्य की किरणे निकल आई थी। बर्फ का पडना भी बन्द हो गया था। जमील कमरे से बाहर निकल कर एक ओर को चल पडा। वह कहा और क्यो जा रहा था— इसका पता तो उसे स्वय भी नही था।

सहसा जमील किसी की आवाज से चौक पडा—'आइये-आइये जमील साहब, सवेरे-सवेरे घर से कैसे निकल पडे ?"

आवाज इसपेक्टर इरशाद की थी। जमील ने चकित-विस्मित दृष्टि से देखा, वह खफिया विभाग के दफ्तर मे खडा था और इसपेक्टर इरशाद कुर्सी पर बैठा हुआ था।

जमील विस्मित दष्टि से इधर-उधर देखने लगा। इरशाद पुन बोल उठा—"बैठिये जमील साहब, आप कुछ परेशान से दिखाई पड रहे है।"

जमील ने कुर्सी पर बैठते हुए कहा — 'हा इसपेक्टर साहब, मैं परेशान ही हू। रात मे तस्कर मेरे ही कमरे मे छिपा हुआ था, दूसरी चारपाई पर सो रहा था। वह मेरा भाजा है जमाल। आप उसे गिरफ्तार कर ले। वह देशद्रोही है, धोखेबाज है। मेरी परे-

शरद जोशी

शानी इसीलिए है कि मैंने एक देशद्रोही को बचाने की कोशिश की।"

इसपेक्टर ध्यान मे जमील की ओर देखने लगा। कुछ क्षणा तक मन ही मन सोचता रहा, फिर बोला—"जमील साहब, आप जो कुछ कह रहे हैं, उसे मैं पहले ही जानता था। मैं जानता था, जमाल आपका भाजा है। वह आपके ही कमरे मे छिपा हुआ है। मैं यह भी जानता था, दूसरी चारपाई पर जमाल ही सो रहा था, पर फिर भी मैंने उसे गिरफ्तार नही किया। यदि मैं जमाल को आपके कमरे मे गिरफ्तार करता, तो आपकी सफेद बुजुर्गी पर धब्बा तो लग ही जाता, आपकी पेशन भी बद हो जाती। आप कितनी ही सफाई क्या न देते, पर सरकार आपको सजा दिये बिना न रहती। मैंने कर्तव्यपालन न करने का अपराध अवश्य किया है, पर मैंने इन्सानियत का पालन किया है। आप चिंता न करें। जमाल तो कभी न-कभी गिरफ्तार होगा ही। जो रोज साप के बिल मे हाथ डालता है, वह किसी-न किसी दिन साप से अवश्य काटा जाएगा।"

जमील की आखो से आसू गिरने लगे। उसने सुबकते सुबकते कहा—"इसपेक्टर साहब, आप मनुष्य नही देवता हैं। आप आज ही जमाल को गिरफ्तार करें। वह पीर की दरगाह के मौलवी के घर मे छिपा हुआ है। वह अकेला नही है। उसके और भी साथी हैं।"

और इसपेक्टर ने उसी समय पीर की दरगाह पर छापा मारा। मौलवी जमाल और उसके साथियो के साथ गिरफ्तार किया गया। बहुत सी पिस्तौले, बदूकें और कागज पत्र भी बरामद किये गये।

हत्या, लूट, तस्करी, देशद्रोह और अवैध ढग से हथियार रखने के अपराध मे जमाल और उसके साथियो पर मुकदमा

चलाया गया।

दिन के ग्यारह बज रहे थे। अदालत के कठघरे मे जमाल खडा था। हाथो मे हथकडिया पडी थी। उसकी मा अशया दूर पर बेंच पर बैठी हुई उसकी ओर देख रही थी।

जमील गवाह के रूप मे पेश हुआ। वह जो कुछ जानता था, बयान मे उसने सच-सच कह दिया।

जमील बयान देकर जाने लगा। अशया की ओर देखने की उसमे हिम्मत तक नही हुई। वह आदमी कुछ ही कदम आगे गया था कि कोई बोल उठा—"भाईजान !"

जमील ने पीछे मुडकर देखा, अशया खडी थी। उसके गमगीन चेहरे पर आखो से आसू ढुलक रहे थे। उसने आगे बढकर जमील का हाथ पकड लिया। उसने रुधे हुए कठ से कहा—'भाईजान आपके बयान से मेरे बेटे को फासी अवश्य होगी, पर आप पर मुझे नाज़ है। आपने जिस तरह बहन और भाजे के प्रेम को ठुकरा कर वतन के लिए सच-सच बयान दिया है, उस पर मनुष्य को ही नही, खुदा को भी नाज होगा।"

जमील जोर से चीख उठा—"अशया प्यारी बहन अशया !!"

जमील वृद्धावस्था की कमजोरी के कारण प्रेम के भार का सहन नही कर सका। वह धरती पर गिर पडा। अशया उसे उठा कर अपने दुपट्टे से उसका मुह पोछने लगी। उसका जिगर पिघल-पिघल कर आखो की राह से जमील की छाती पर गिर रहा था टप टप गिर रहा था।

शरद जोशी

नई मसजिद

पाटण का नपति सिद्धराज अपनी मा के साथ सोमनाथ जा रहा था, दर्शन के निए, जलाभिषेक के लिए। साथ मे घोडे, हाथी, वाहन, सिपाही और दास-दासिया सव थे।

दिन भर चलता था, सध्या समय पडाव डाल देता था। प्रभात होने पर पुन यात्रा प्रारभ हो जाती थी।

रात का प्रथम चरण था। सिद्धराज अपने शिविर मे चटाई पर वैठकर राजधानी से आये हुए कागज़-पत्रो को देख रहा था। द्वार-रक्षक ने पहुचकर निवेदन किया—"महाराज, द्वार पर एक फकीर खडा है। वह आपसे मिलना चाहता है।"

सिद्धराज ने द्वार-रक्षक की ओर देखते हुए कहा—"ले आओ उसे।"

कुछ ही क्षणो पश्चात फकीर सिद्धराज के सामने था। उसके सिर पर वडे-वडे वाल थे। वह फटा हुआ, लम्बा कुरता पहने हुए था।

सिद्धराज ने फकीर की ओर देखते हुए कहा—"क्या वात है वावा ? रात मे मेरे पास क्यो आए हो ?"

फकीर सिमक सिसककर रोने लगा। उसकी आखो से निकल-निकलकर आसू उसके फटे और मैले कुरते को भिगोने लगे।

सिद्धराज चकित दृष्टि से फकीर की ओर देख रहा था। वह उसकी ओर देखता ही देखता वोला—"क्या वात है वावा, क्यो

आसू की बूदें नही, हृदय के टुकडे गिरा रही थी।

सिद्धराज फकीर के आसुओ की ओर देखता हुआ बोला—"बाबा, दुख मत करो। तुम्हारी गिरी हुई मसजिद फिर बन जाएगी। तुम अपने गाव लौट जाओ।"

सिद्धराज ने उसी समय सिपाहियो के नायक को बुलाकर कहा—"तुम बाबा के साथ मूलराजपुर जाओ, मुसलमानो की सुरक्षा का प्रबन्ध करो। मैं भी शीघ्र ही पहुच रहा हू। जब तक मैं न पहुचू, तुम्हे वही रहना होगा।"

नायक और फकीर दोनो सिर झुकाकर शिविर से बाहर चले गये।

सिद्धराज उठकर टहलने लगा, चिन्तापूर्वक टहलने लगा।

(२)

प्रात के आठ बज रहे थे। सिद्धराज नहा-धोकर, राजमाता के शिविर मे जा पहुचा। राजमाता स्वण पात्र मे शिव की मूर्ति रखकर, जलाभिषेक कर रही थी।

सिद्धराज ने राजमाता के समक्ष झुकते हुए कहा—"प्रणाम निवेदित करता हू मातरे!"

राजमाता आशीर्वाद देती हुई बोली—"बैठो बेटा सिद्धराज! तुम इस समय मेरे शिविर मे? यह तो तुम्हारी शिव-पूजा का समय है।"

सिद्धराज आसन पर बैठता हुआ बोला—"हा मा, है तो, पर आज मेरा मन शिव की पूजा मे नही लग रहा है।"

राजमाता विस्मय से भरे हुए नेत्रो से सिद्धराज की ओर देखती हुई बोली—"तुम्हारा मन आज शिव की पूजा मे नही लग रहा है? यह कैसी बात? यह तो तीर्थयात्रा मे अमगल है—विघ्न है।"

सिद्धराज उदासीनता भरे स्वर मे बोला—"अमगल है या नही—यह तो मैं नही जानता, पर सच यही है कि आज मेरा मन शिव की पूजा मे नही लग रहा है। मा, तुम सोमनाथ जाओ, मैं यही से राजधानी लौट जाऊगा। मैं तुम्हारी आज्ञा चाहता हू।"

राजमाता साश्चय बोल उठी—"तुम यही से राजधानी लौट जाओगे ? क्यो लौट जाओगे ? वर्षो से सोमनाथ की यात्रा की मनौतिया मानती आ रही हू। आज जब आधे मार्ग पर पहुच गई हू, तो तुम लौट जाना चाहते हो ? यह नही हो सकता। तुम्हे मेरे साथ सोमनाथ चलना ही पडेगा।"

सिद्धराज बोला—"मैं नही जा सकूगा मा, मैं विवश हू। मुझे राजधानी लौट ही जाना होगा। मा, पाटण के पास मूलराजपुर गाव है न ! वहा साम्प्रदायिक दगा हो गया है। हिन्दुओ ने मुसलमानो की मसजिद गिरा दी है।"

राजमाता बोल उठी—"तो क्या हुआ ? राज्य मे तो दगा-फसाद होते ही रहते हैं। दगा-फसाद के पीछे अपना धम-कर्म छोड़ दोगे ? प्रधानमत्री के पास सदेश भेज दो। वे गाव मे जाकर स्थिति को सभाल लेगे।"

सिद्धराज ने निवेदन किया—"प्रधानमत्री राजा नही है मा, राजा म हू। राजा का धम-कर्म प्रजा की शान्ति और एकता है मा !"

राजमाता सिद्धराज की ओर देखती हुई बोली—"हा है तो, पर तुम वहा जाकर करोगे क्या ?"

सिद्धराज ने उत्तर दिया—"मा, मै वहा जाकर उ हे दड दूगा, जि होन मसजिद गिराई है या गिराने मे भाग लिया है। म पता लगाऊगा, उनके भीतर साम्प्रदायिकता का विप कैसे उत्पन्न हुआ।"

शरद जोशी

राजमाता विचारो की लहरो मे डूबी हुई बोली—"तुम हिन्दू होकर हिन्दुओ को दड दोगे ? यह कैसी बात ? मुसलमानो ने बहुत से मदिर गिरा दिये थे, मदिरो की मूर्तिया भी तोड दी थी। क्या उन्होने भी तुम्हारी तरह सोचा था ?"

सिद्धराज बोला—"मैं उनकी बात नही कर रहा हू मा, अपनी बात कर रहा हू। म हिन्दू हू, शिवभक्त हू और राजा हू। मा, राजा के लिए न तो कोई हिन्दू होता है, न मुसलमान होता है। सब प्रजा होने है, पुत्र होते हैं। पिता अपनी सतानो को प्रेम और न्याय देने मे भेद नही करता मा !"

राजमाता मौन रही। सिद्धराज ने कुछ क्षणो तक मौन रहकर फिर कहा—"मा, मै उस देश का वासी हू, जहा उपनिषद लिखे गये है। उपनिषदो मे लिखा है मा, सभी धम एक समान हैं, सब मे एक ही ईश्वर का निवास है। म जाऊगा मा, मुझे आज्ञा दो।"

राजमाता ने उदासीनता के साथ कहा—"जाना चाहते हो, तो जाओ। मुझे जो कुछ कहना था, कह दिया। तुम राजा हो। निणय करना तुम्हारा काम है, मेरा नही।"

सिद्धराज आसन से उठ पडा और राजमाता को प्रणाम करके द्वार की ओर चल पडा। राजमाता विस्फारित नेत्रो से सिद्धराज की ओर देखने लगी, रह-रह कर देखने लगी।

(३)

दिन के दस बज रहे थे। सिद्धराज अधिकारियो के दल के साथ मूलराजपुर मे टूटी हुई मसजिद के पास उपस्थित हुआ। फकीर बिखरी हुई ईंटो को बीन-बीनकर एकत्र कर रहा था।

सिद्धराज को देखते ही फकीर दौड पडा। उसने नम्रतापूवक झुकते हुए कहा—"आप धन्य हैं महाराज ! आपने हमे न्याय देने

के लिए सोमनाथ की यात्रा छोड दी ?"

सिद्धराज बोला—"यह भी तो एक तीथ-यात्रा ही है बाबा ! बाबा, उन मनुष्यो के नाम बताओ, जिन्होने ममजिद गिराई है या गिराने मे भाग लिया है।"

फकीर ने लगभग पचासो मनुष्यो के नाम गिना दिये। सिद्धराज ने उन सभी मनुष्यो को बुलाने की आज्ञा दी, पर उनमे से एक भी नही मिला। वे डरकर गाव छोड गये थे। सिद्धराज बडा दुखी हुआ। उसने गाव के शेप मनुष्यो को बुलाकर कहा—"मसजिद को गिराने वाले लोगो ने भागकर यह सिद्ध कर दिया है कि उन्ही के द्वारा यह जघन्य पाप हुआ है। पर इस पाप का दायित्व किसी और के ऊपर न डालकर मैं अपने ऊपर ले रहा हू। मै किसी और को दड न देकर अपने आप को दड दूगा। म राजा हू। प्रजा मे जब कोई दोप उत्पन्न होता है तो उसका अर्थ यह होता है कि दोप प्रजा मे नही राजा मे है। म प्रायश्चित्त करूगा, कधे मे झोली लटकाकर नई मसजिद के लिए दर-दर भीख मागूगा। जब तक मसजिद के लिए पूरा धन एकत्र नही कर लूगा, भीख मागना बन्द नही करूगा।"

गाव के स्त्री-पुरुष एक साथ ही जोर से बोल उठे—"हम आपको ऐसा नही करने देगे महाराज ! हम नई मसजिद बना देगे और उन्हे भी आपके सामने उपस्थित कर देंगे, जो भाग गए है।"

सिद्धराज दृढतापूर्वक बोला – "पर इससे क्या होगा ? इससे वह बुराई तो दूर हो नही जाएगी, जिसकी प्रेरणा से ममजिद गिराई गई है। वह बुराई तो तब दूर होगी, जब लोग हृदय से यह अनुभव करेंगे कि सभी धम एक समान है, सब मे एक ही ईश्वर है। मुझे उस बुराई को दूर करने के लिए भीख मागनी होगी, मागनी ही होगी।"

सिद्धराज अपने निर्णय के अनुसार कधे मे झोली लटकाकर

मसजिद के लिए भीख मागने लगा। उसके साथ गाव के स्त्री-पुरुष तो भीख मागने ही लगे, राज्य के लाख-लाख नर-नारी भी भीख मागने लगे।

इधर सिद्धराज भीख मागने लगा और उधर मसजिद बनने लगी। जब मसजिद बनकर तैयार हो गई तो सिद्धराज ने अपने हाथो से उसका उदघाटन किया। उसने उद्घाटन करते हुए कहा—"आज से मेरे राज्य मे इस कानून का कडाई के साथ पालन किया जायगा कि कोई मनुष्य धर्म और ईश्वर के नाम पर किसी को छोटा न समझे, किसी पर अत्याचार न करे, जो ऐसा करेगा, उसे एक सौ एक दिन तक कधे मे झोली लटकाकर भीख मागने का दड दिया जायगा।"

सुनते है, पाटण के राज्य मे यह कानून बहुत दिनो तक प्रचलित रहा। काश आज भी देश मे वह कानून प्रचलित होता!

लाजवन्ती

लाजवन्ती एक स्त्री ही थी। दूसरी स्त्रियो की तरह उसमे भी शील और सकोच था, पर वह कुछ बातो मे दूसरी स्त्रियो से बिल्कुल भिन्न थी। वह प्राय गुमसुम रहती थी। बुलाने पर तो बोलती थी, पर बिना मतलब गपशप नही करती थी। ठठाकर हसती भी नही थी। जिस तरह नीर से भरी हुई बदली गुमसुम होती है, उसी तरह लाजवन्ती भी गुमसुम दिखाई पडती थी। उसे देखने से ऐसा लगता था, मानो वह अपने भीतर अथाह भावो के जाल छिपाये हो।

पर लाजवन्ती काम करने मे बडी तेज थी। झाडू-बुहारी से लेकर रोटी बनाने तक का काम चट-पट कर डालती थी। जिस तरह निर्जीव मशीन चलती है, उसी तरह लाजवन्ती भी चलती रहती थी। उसके भीतर कभी स्त्री का कोई उद्दाम वेग पैदा होता था या नही—कहा नही जा सकता, पर वह अपने पति की ओर से बिल्कुल उदासीन रहती थी।

लाजवन्ती का पति अजितसिंह तडके ही घर से निकल जाता था और रात मे दस-ग्यारह बजे बाहर से ही खाना खाकर लौटता था। कमरे मे पहुचते ही सो जाता था। बात करने की कौन कहे, लाजवन्ती की ओर उसका ध्यान तक नही जाता था।

लाजवन्ती भी अजित की ओर से बिल्कुल उदासीन रहती थी। उसके आने-जाने मे कभी भी दीवार बनकर खडी नही होती

थी। कभी भी उससे पूछनी नही थी—वह कहा जाता है, क्या करता है और रात मे देर से क्यो लौटता है ? बस वह इतना ही जानती थी कि अजित के पास पैसे बहुत हैं और वह खूब खर्च करता है। पैसे कहा से आते है—इस बात को जानने का उसने कभी भी प्रयत्न नही किया।

रात का समय था। ग्यारह बज रहे थे। अजित जब घर लौटा तो उसके साथ एक और भी आदमी था। अजित उस आदमी को लकर अपने कमरे मे चला गया और भीतर से दरवाजा बन्द करके उसके साथ बात करने लगा।

लाजवन्ती के मन मे कुछ सन्देह-सा उत्पन्न हो उठा। वह अजित के कमरे के दरवाजे पर गई और एक ओर खडी होकर दोनो की बातचीत को सुनने का प्रयत्न करने लगी—

नये आदमी ने अजित से पूछा—"कहो, कैसा चल रहा है ?"

अजित ने उत्तर दिया—"सब कुछ योजना के अनुसार ही चल रहा है। कुछ पुलिस के लोग और कर्मचारी भी साथी बन गए है। जो कहता हू, वही करते हैं।"

आदमी बोला—"शाबाश ! पैसे की चिन्ता मत करो। एक की जगह चार खर्च करो। बडे-बडे अफसरो को भी पैसे से मुट्ठी मे कर लो। फाइलें उडवा दो। हम इतना धन देंगे तुम्हे कि तुम्हे जिन्दगी भर कोई काम करने की जरूरत नही पडेगी।"

लाजवन्ती दोनो की बातचीत सुनकर यह जानने के लिए उत्कठित हो उठी कि यह आदमी कौन है, कैसी फाइलें उडवाने के लिए कह रहा है और क्यो उसके पति को धन देने के लिए कह रहा है।

लाजवन्ती बडी चतुराई से अपने पति की गुप्तचरी करने लगी। महीनो तक गुप्तचरी करने के बाद उसे पता चल गया कि उसका पति पाकिस्तान का एजेन्ट है। उसे ज्ञात हो गया कि

अजित पाकिस्तान से धन लेकर हिन्दुस्तान मे जासूसी कर रहा है। अफसरो और पुलिस के लोगो को मिलाकर आवश्यक फाइले और कागज-पत्र उडवाने का प्रयत्न कर रहा है।

लाजवन्ती चिन्तित हो उठी। वह अपने कमरे मे पडी-पडी सोचा करती थी—एक ओर तो पाकिस्तान, अमेरिका से हथियार खरीद रहा है, और दूसरी ओर अजित-जैसे देशद्रोहियो को मिलाकर देश मे जासूसी करा रहा है। सब कुछ जान लेने पर वह अवश्य आक्रमण करेगा, अवश्य। यदि उसने आक्रमण किया तो पजाब मरघट बन जायगा, मदिर, मसजिद, गुरुद्वारे ढह जाएगे, दिल्ली वीरान हो जाएगी और मातृभूमि का सुहाग लुट जायगा। पर नही, मैं ऐसा होने नही दूगी। मैं अजित की काली करतूतो का भडाफोड करूगी। मैं स्वय बेवा बन जाऊगी, पर मातृभूमि को गुलाम बनने नही दूगी।

लाजवन्ती के मन मे अजित के प्रति घृणा ही नही, विद्रोह भी पदा हो उठा।

रात का समय था। ११ बजे जब अजित घर लौट कर गया, तो लाजवन्ती उसके कमरे मे जाकर उसके पास खडी हो गई। अजित उसकी ओर देखता हुआ बोला—"क्या बात है ? आज अभी तक सोई क्यो नही ?"

लाजवन्ती ने उत्तर दिया—"नीद नही आ रही है। भाई की शादी पडी है। मैं पीहर, अमृतसर जाऊगी।"

अजित लापरवाही के साथ बोला—"जरूर जाओ। जेब म पसे है। चाहे जितने पैसे ले लो।"

और दूसरे दिन लाजवन्ती अमृतसर चली गई। पर अमृतसर मे भी उसका मन नही लगता था। उसकी आखो के सामने रात-दिन दृश्य नाचा करता था—पाक के हमले से मदिर, मसजिद, गुरुद्वारे ढह रहे हैं, स्त्रियो के सुहाग लुट रहे ह, माताओ की गोदे

सूनी हो रही हैं और बहनो की कलाइयो की चूडिया टूट रही हैं। चारो ओर चीख-पुकार है, चारो ओर करुण क्रन्दन है।

लाजवन्ती का हृदय रह-रहकर काप उठता था। आखिर वह मामू के घर जाने का बहाना करके घर से निकल पडी और नई दिल्ली जा पहुची। नई दिल्ली मे ही उसकी ससुराल थी। वह एक-एक सडक से परिचित थी। वह नई दिल्ली मे अपनी ससुराल न जाकर, धमशाला मे ठहर गई। उसके मन मे विद्रोह की आग जल रही थी। उसे कुछ भी अच्छा नही लग रहा था। उसे ऐसा लग रहा था कि उसके भीतर जो कुछ है, यदि वह उसे बाहर नही निकाल देगा, तो वह मर जायेगी।

दिन के ग्यारह बज रहे थे। लाजवन्ती स्कूटर पर बैठकर गुप्तचर विभाग के कार्यालय मे प्रधान अधिकारी की सेवा मे उपस्थित हुई। उसने उसे अजित की पूरी कहानी बता दी।

अधिकारी ने लाजवन्ती की पीठ ठोकते हुए कहा—"यदि तुम्हारी बात सच हुई, तो सरकार तुम्हे बहुत बडा पुरस्कार देगी।"

लाजवन्ती बोल उठी—"मैंने जो कुछ कहा है, अपने पति के विरुद्ध कहा है। मैं जानती हू, यदि अजित गिरफ्तार हुआ, तो उसे फासी की सजा मिलेगी। मैं जान-बूझकर अपनी चूडिया तोड रही हू, पुरस्कार के लिए नही, मातृभूमि की रक्षा के लिए।"

लाजवन्ती उठकर चली गई और गुप्तचर विभाग के अधिकारी उसी दिन से अजित की गतिविधियो का पता लगाने लगे।

छान-बीन करने और पता लगाने पर अधिकारियो को ज्ञात हो गया, लाजवन्ती ने जो कुछ कहा है, सच है। फिर तो अधिकारियो ने अजित के घर पर छापा मारकर उसे गिरफ्तार कर लिया। अधिकारियो को उसके कमरे से कई पिस्तौल, लाखो रुपयो के पाकिस्तानी नोट और कागज-पत्र भी प्राप्त हुए। कागज-पत्रो

से पता चला कि उसका कई हत्याओ और लूट से सम्बध है।

अजित पर मुकदमा चलाया गया। उसे हत्या, लूट और देश-द्रोह के अपराध मे फासी की सजा दी गई।

अजित को फासी की चिता नही थी, चिता थी इस बात की कि उसका भेद किसने और कैसे खोला ? वह जेल की कोठरी मे पडा-पडा इसी बात को सोचा करता था।

फासी के दो-तीन दिन पूर्व जेलर ने अजित के पास जाकर उससे पूछा—"तुम्हारी कोई अतिम इच्छा तो नही है ?" अजित ने उत्तर दिया—"मैं फासी पर चढने के पूव एक बार अपनी पत्नी से मिलना चाहता हू ।"

लाजवन्ती को सूचना दी गई। वह अजित से मिलना नही चाहती थी, पर विधि के विधान ने उसे जेल मे अजित के पास भेज दिया।

दिन के ग्यारह बज रहे थे। लाजवन्ती जेल की कोठरी मे अजित के पास ही बैठी हुई थी। अजित ने उसकी ओर देखते हुए कहा —"लाजवन्ती, मैं तुम्हारा पति हू, फासी पर चढने जा रहा हू। एक बात पूछता हू, झूठ मत बोलना। सच सच बताओ, मेरा भेद सरकार पर किसने प्रकट किया ?"

लाजवन्ती गर्व से बोल उठी —"मैंने। तुम मेरे पति हो, मैं तुम्हे देश की पीठ पर छुरा भोकते हुए नही देख सकती थी। तुम फासी पर अवश्य चढ रहे हो और मैं बेवा बन रही हू, पर मैंने तुम्हारा रहस्य प्रकट करके पाप नही पुण्य किया है। मैंने तुम्हे नरक मे जाने से बचाया है।"

लाजवन्ती ने अपने कथन को समाप्त ही किया था कि गोलियो की आवाज से कोठरी गूज उठी। अजित ने उसकी छाती मे गोलिया मारकर उसे सदा के लिए सुला दिया। वह अपनी गोलियो से अपनी भी हत्या कर लेना चाहता था पर अधिकारियो

ने दौडकर उसे पकड लिया।

लाजवन्ती शहीद हो गई। अजित देश-द्रोह के अपराध मे फासी पर चढ गया, पर अधिकारी वहुत प्रयत्न करने पर भी यह नही जान सके कि जेल की कोठरी मे अजित के पास पिस्तौल कसे पहुची, कैसे पहुची ?

मेरा मन भी बार-बार यही प्रश्न करता है कि जेल की कोठरी मे अजित के पास पिस्तौल कैसे पहुची, कैसे पहुची ? यदि कोई इस प्रश्न के उत्तर मे अधिकारियो की लापरवाही कहे, तो क्या आश्चय होगा ?

देव-मदिर के लिए भूमि

लगभग पन्द्रह-सोलह सौ वर्ष हुए।

दोपहर के पूर्व का समय था। कश्मीर राज्य के अधिकारी और इजीनियर श्रीनगर मे एक भूमि-खड की नाप-जोख कर रहे थे। उन्होने उस भूमि-खड को एक विशाल देव-मदिर के निर्माण के लिए पसन्द किया था। कश्मीर के नृपति चन्द्रपीडादित्य की अभिलाषा एक मदिर निर्माण की थी। उन्ही की इच्छा-पूर्ति के लिए मदिर बनने वाला था।

उस भूमि-खड मे एक झोपडी खडी थी। झोपडी मे एक चमार रहता था, जो बडा दरिद्र था।

चमार ने झोपडी से बाहर निकलकर अधिकारियो से प्रश्न किया—आप लोग इस भूमि की नाप-जोख क्यो कर रहे हैं?

अधिकारियो ने उत्तर दिया—महाराज चन्द्रपीड की इच्छा मदिर-निर्माण की है। हम लोगो ने मदिर के लिए इसी भूमि को पसन्द किया है। यहा मदिर बनेगा।

चमार बोला—पर यह भूमि तो मेरी है। यहा मदिर कैसे बन सकता है? मदिर बनेगा, तो मेरी झोपडी मिट्टी मे नही मिल जाएगी?

अधिकारियो ने उत्तर दिया—इस भूमि के बदले मे हम तुम्हे दूसरी भमि दिला देंगे और वहा तुम्हारे लिए नयी झोपडी भी बना देंगे।

शरद जोशी

चमार ने उत्तर दिया—मुझे दूसरी भूमि नही चाहिए और न नयी झोपडी चाहिए। इस झोपडी मे मेरे पूर्वज रह चुके है। मेरा भी जन्म इसी झोपडी मे हुआ है। यह झोपडी मुझे स्वर्ग के समान प्रिय है। इस भूमि पर मदिर नही बन सकता।

अधिकारी आश्चर्य बोल उठे—यह तुम क्या कह रहे हो? महाराज चन्द्रपीड की इच्छा-पूर्ति मे बाधा डाल रहे हो? यदि हम तुम्हारी भूमि को बलपूर्वक ले ले तो?

चमार बोला—आपके पास राज्य को शक्ति है, आप लोग ऐसा कर सकते हैं, पर सास रहते हुए मैं भूमि पर अधिकार नही करने दूगा। भूमि पर अधिकार तभी होगा, जब मेरी सास निकल जायेगी।

अधिकारी चिंता मे पड गये। वे काम बद करके सोचने लगे—किया जाये तो क्या किया जाये। वे बिना प्रधान मत्री की आज्ञा के बल का प्रयोग नही कर सकते थे। न्याय और कानून ने उनके हाथ बाध रखे थे।

अत अधिकारियो ने प्रधान मत्री को सूचना दी। प्रधान मत्री भी राजा की आज्ञा के बिना बल प्रयोग करने की सलाह नही दे सक्ते थे, क्योकि चद्रपीड बडे न्यायप्रिय थे। वे सब कुछ छोड सकते थे, पर न्याय नही छोड सकते थे।

फलत प्रधान मत्री ने राजा को सूचना दी। राजा ने कहा—आप लोगो को पहले ही सोच समझकर भूमि पस द करनी चाहिए थी। अब तो चमार की इच्छानुसार ही काम करना होगा।

प्रधान मत्री ने सलाह दी—महाराज, बिना कठोरता के काम नही चलता। चमार हठधर्मी कर रहा है। मेरी राय मे उसकी भूमि पर बलपूर्वक अधिकार कर लेना चाहिए।

चद्रपीड ने उत्तर दिया—नही, ऐसा नही करना चाहिए। भूमि चमार की है, मेरी नही। वह अपनी भूमि नही देना चाहता

तो उस पर बलपूर्वक अधिकार करना अन्याय होगा। चमार भी एक मनुष्य है, उसे अपना विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता है। मनुष्य की स्वतन्त्रता मे बाधा डालने से समाज मे अशान्ति पैदा होती है। चमार को राजसभा मे बुलाया जाये, पर अधिकार के बल से नही, निवेदनपूर्वक।

दूसरे दिन चमार राजसभा मे उपस्थित हुआ। महाराज चन्द्रपीड सिंहासन पर थे। मत्री, अधिकारी और सभासद—सभी अपने-अपने स्थान पर बठे हुए थे।

चन्द्रपीड ने चमार की ओर देखते हुए प्रश्न किया—क्या तुम्ही उस भूमि-खड के स्वामी हो, जिस पर मदिर बनाया जा रहा है ?

चमार ने विनम्रता से उत्तर दिया—हा महाराज ! मै ही उस भूमि खड का स्वामी हू।

चन्द्रपीड न दूसरा प्रश्न किया—तुमने भूमि की नाप-जोख करने से रोक क्यो दिया ? मेरे इजीनियरो ने मदिर के निर्माण के लिए उसी भूमि को पसन्द किया है।

चमार ने उत्तर दिया—महाराज, उस भूमि पर मेरी झोपडी है। उस झोपडी मे मेरे पूर्वज रह चुके है। मेरा भी जन्म उसी झोपडी मे हुआ है। यदि मदिर बनेगा, तो मेरी झोपडी मिट्टी मे मिल जायेगी।

चन्द्रपीड सोचने लगे। उन्होने सोचते सोचते कहा—मै उस भूमि खड के बदले मे तुम्हे दूसरी भूमि दूगा। झोपडी के बदले मे तुम्हारे लिए पक्का भवन बनवा दूगा। तुम अपनी भूमि मदिर के लिए दे दो।

चमार बोला—महाराज, झोपडी म मेरे पूर्वज रह चुके ह। इसलिए झोपडी की भूमि मेरी पितृभूमि है। झोपडी मे मेरा जन्म हुआ है। इसलिए झोपडी की भूमि मेरी मातृभूमि है। मै अपनी

पितृभूमि और मातृभूमि को स्वर्ग से भी अधिक गौरववान समझता हू। मैं उसे नही दे सकता, महाराज!

महाराज चन्द्रपीड विचारो की लहरो मे डूब गये। कुछ क्षणो तक सोचते रहे, फिर चमार की ओर देखते हुए बोले—क्या तुम किसी भी तरह उस भूमि-खड को नही दे सकते?

चमार सोचने लगा। चन्द्रपीड के न्याय और उनकी उदारता ने उसके प्राणो को बाध लिया था। वह यह सोचकर मुग्ध हो रहा था कि चन्द्रपीड राजा है। उनके पास शक्ति है। वे चाहे, तो मेरी भूमि छीनकर ले सकते है, मुझे बन्दी बना सकते हैं, पर फिर भी वे मुझसे बार-बार प्रार्थना कर रहे है। वे मनुष्य नही, देवता है। चमार सोचता हुआ बोला—महाराज, आपके कहने पर मैं अपनी भूमि दे सकता हू, पर मेरी एक शर्त है।

चन्द्रपीड बोल उठे—बताओ, तुम्हारी क्या शर्त है?

चमार ने निवेदन किया—महाराज, वामन भगवान की तरह भूमि की भिक्षा मागने के लिए आपको मेरी झोपडी के द्वार पर आना होगा।

चमार की बात सुनकर अधिकारीगण गरज उठे—ऐसा नही हो सकता, ऐसा नही हो सकता। महाराज, यह चमार दुष्ट है। इसे बन्दी बनाकर कारागार म डाल देना चाहिए।

चन्द्रपीड ने सबको शान्त करते हुए कहा—शान्त हो अधिकारियो, शान्त हो। चमार भी समाज का अग है, मैं उसकी इच्छा पूरी करूगा। मैं भूमि की भिक्षा मागने के लिए उसकी इच्छा पूरी करूगा। श्रेष्ठ चमार, मैं कल प्रात काल दस बजे तुम्हारी झोपडी के द्वार पर आऊगा।

और अगले दिन महाराज चन्द्रपीड अधिकारियो के साथ चमार की झोपडी के द्वार पर उपस्थित हुए। चमार ने अजलि मे जल और कुश रखकर चन्द्रपीड को अपनी भूमि दान मे दे दी।

शरद जोशी

विशाखा की अर्थी

सध्या के पश्चात् का समय था। दीपक जल उठे थे। अरण ने घर मे प्रवेश करते हुए कहा—भाभी! क्या कर रही हो, भाभी? क्या खाना वना रही हो?

उत्तर मिला—हा, खाना ही बना रही हू।

आवाज अरुण की भाभी विशाखा की थी। वह रसोईघर मे खाना बना रही थी।

अरुण बोल उठा—कुछ तयार हो, तो मुझे दे दो। मुझे एक मीटिंग मे जाना है।

विशाखा बोली—अभी तैयार किये देती हू। कौन-सी मीटिंग मे जाना है?

अरुण ने उत्तर दिया—तुमने सवेरे सुना था न, किसी नराधम ने शिवजी के मदिर मे मास का टुकडा फेंक दिया था। उसी पर विचार करने के लिए आज मीटिंग हो रही है।

विशाखा रसोईघर से ही बोली—तो मीटिंग म क्या निणय करोगे? तुम लोग भी दूसरे धर्मा के प्रार्थना गृहो मे माम का टुकडा फेकोगे? यही न?

अरुण बोला—मास का टुकडा फेकनेवालो के विरुद्ध कुछ करना ही होगा, भाभी! आज मदिर मे मास का टुकडा फेका है, कल मूर्ति खडित कर देगे। चुप रहने से तो दुप्टा का दिमाग बढता जायेगा। ईट का जवाब ईट से और पत्थर का जवाब

आई हो ?

रूपकौर सिसक सिसककर रोने लगी। वह कुछ कहना चाहती थी, पर पीडा के कारण उससे कहा नही जा रहा था।

विशाखा बोल उठी—कहो कहो रूपकौर, क्या कहना चाहती हो ? जो कुछ कहना चाहती हो भय और सकोच छोडकर कहो। मुझे अपनी वडी बहन समझ कहो।

रूपकौर सिसकती हुई बोली—बहन विशाखा, कल रात मे किसी दुष्ट ने शिवजी के मदिर मे मास का टुकडा फेंक दिया था। गुडे उसका वदला निरपराध लोगो से ले रहे हैं। मैंने सुना है, मुहल्ले के कुछ असामाजिक तत्त्वों ने दुकानें लूटने और घर जलाने की योजना वनाई है। बहन म तुम्हारी शरण चाहती हू।

विशाखा बोल उठी—तुम सच कह रही हो रूपकौर, ऐसी योजना बनाई है ? तुम विलकुल मत डरो। अपने वाल-बच्चो को लेकर मेरे पास आ जाओ।

और रूपकौर शीघ्र ही अपने वाल-बच्चो को लेकर विशाखा के घर चली गई। विशाखा ने कुछ ही देर के पश्चात् वडे आश्चर्य के साथ देखा, रूपकौर का घर जल रहा है, इधर उधर आग की लपटें उठ रही हैं और चीख-पुकार मची हुई है।

विशाखा मस्तक पकडकर चारपाई पर बैठ गई। उसके मुख से अपने आप ही निकल पडा—अरुण और उसकी मीटिंग।

अरुण रात मे कव आया—कुछ पता नही। सबेरे जव वह उठा, तो अपने घर मे रूपकौर और उसके वाल बच्चों को देखकर चकित हो उठा। वह आवेग मे भरा हुआ विशाखा के कमरे मे जा पहुचा, बोला—भाभी, रूपकौर और उसके वच्चे मेरे घर मे क्यो हैं ?

विशाखा ने उत्तर दिया—तुम दानव से वचने के लिए। तुम सबने रात मे उसका घर जला दिया। यदि वह घर मे होती, तो

सब उसे भी मार डालते। मैंने उसे अपनी शरण मे जगह दी है।
अरुण क्रुद्ध हो उठा—वह क्रोध भरे स्वर मे बोला—जो लोग मरे धर्म से द्रोह करते है, तुम उन्हे शरण नही दे सकती, भाभी। यह घर तुम्हारा ही नही है, मेरा भी है। म कहता हू उन्हे घर से बाहर निकाल दो।

विशाखा बोल उठी—यह नही हो सकता, यह नही हो सकता। तुम्हे अपनी जाति और अपना धर्म प्रिय है, मुझ अपना देश प्रिय है। रूपकौर मेरी बहन और उसके बच्चे मेरे बच्चे है। म प्राण दे दूगी, पर रूपकौर और उसके बच्चे मेरे घर से नही जा सकते, नही जा सकते।

लोगो का कहना है, दीवारो क भी कान होते है। कदाचित् दीवारो के कानो ही के द्वारा सारे मुहल्ले म यह खबर फैल गई कि रूपकौर ने अपने बच्चो के साथ विशाखा के घर मे शरण ली है। असामाजिक तत्त्वो ने विशाखा के भी घर को घेर लिया। अरुण भी उनमे मिल गया। सब जोर-जोर से कहने लगे—"रूपकौर और उसके बच्चो को घर से बाहर निकाल दो, घर से बाहर निकाल दो।"

विशाखा फटा मारकर द्वार पर खडी हो गई। वह चीख-चीखकर कहने लगी—ऐसा नही हो सकता, ऐसा नही हो सकता। रूपकौर मेरी बहन है, उसके बच्चे मेरे बच्चे है। म अपनी बहन और अपने बच्चो को घर से नही निकाल सकती, नही निकाल सकती।

खबर पुलिस के कानो म जा पहुची। सशस्त्र दल दौडकर घटना स्थल पर जा पहुचा। पुलिस दल को देखते ही असामाजिक तत्त्व भाग खडे हुए, पर गोली की आवाज भी सुनाई पडी। पुलिस दल न आश्चर्य के साथ देखा कि विशाखा चीखकर गिर पडी है, उसकी छाती से रक्त के फव्वारे निकल रहे हैं।

शरद जोशी

रूपकौर दौडकर विशाखा की छाती पर गिर पडी और सिर धुन-धुनकर कहने लगी—हत्यारो ने मेरी वहन को मार डाला, मार डाला।

अरुण मस्तक झुकाये हुए खडा था। उसके मुह से न आवाज निकल रही थी, न आखो से आसू निकल रहे थे। वह पत्थर की मूर्ति सा वन गया था।

विशाखा की अर्थी जव उठी, तो अर्थी को कधा देने के लिए लाखो हिन्दू, मुसलमान और सिख एकत्र हुए। विशाखा सवके कधो पर चढकर श्मशान गई। श्मशान मे जव विशाखा की चिता जलने लगी, तो हिन्दू, मुसलमान, सिख सवने कठ से कठ मिलाकर नारा लगाया—"मा, हम वायदा करते हैं, आपस मे कभी नही लडेंगे, कभी नही लडेगे। हिन्दुस्तान को अपना देश समझेंगे, अपना वतन समझेगे।"

बेगम और कुरान

मुगल सेनापति बहलोल खा अपने हजारो सनिको के साथ पडाव डालकर पडा हुआ था। वह शिवाजी पर आक्रमण करके, उ ह मिट्टी मे मिला देना चाहता था। वह मुगल सम्राट औरगजेब के सामने प्रतिज्ञा करके निकला था कि यदि मै शिवाजी को मिट्टी मे नही मिला दू, तो अपना मुख नही दिखाऊगा।

रात का समय था। धरती गाढे अधकार की चादर तानकर सोई हुई थी। चारो ओर सन्नाटा था, स्तब्धता थी। मरहठा सरदार माधवराव मामलेकर अपने सैनिको के साथ दवे पाव वहलोल के पडाव के पास जा पहुचे। जिस प्रकार बिजली टूटकर गिरती है, उसी प्रकार मामलेकर अपने सैनिको को लेकर पडाव पर टूट पडे। जब तक मुगल सैनिक जिरह-बख्तर पहने और हथियार सभालें, उसके पूर्व ही मरहठा सैनिको ने बहुतो को मृत्यु के घाट उतार दिया। मुगल सेना मे भगदड मच गई। बचने का कोई उपाय न देखकर बहलोल भी प्राण बचाकर भाग खडा हुआ।

मुगल सेना जब भाग गई, तो मामलेकर अपने कुछ सैनिको के साथ एक-एक शिविर मे घुस-घुसकर जाच पडताल करने लगे। उन्हे बहुत से रुपये, पैसे, हथियार और वस्त्र प्राप्त हुए।

मामलेकर बहलोल के भी शिविर मे गये। वे उसके शिविर मे एक अतीव सुदर स्त्री और कुरान को देखकर चकित हो उठे।

वह सु दर स्त्री वहलोल की बेगम थी। वहलोल तो स्वय भाग गया था, पर शीघ्रता के कारण अपनी वेगम को साथ नहीं ले जा सका था। मनुष्य वडा स्वार्थी होता है। उसके अपने प्राणो पर जब सकट आ जाता है, तो वह अपने प्रिय-से प्रिय जन को भी भूल जाने मे सकोच नही करता।

मामलेकर वहलोल की बेगम और कुरान को देखकर वहुत प्रसन्न हुए। उन्होने अपने साथियो से कहा—वेगम स्वर्ग की अप्सरा के समान सुन्दर है। इसे और कुरान की पुस्तक को साथ ले चलो। महाराज शिवाजी दोनो चीजो को पाकर वहुत प्रसन्न होगे और हम सबको पुरस्कृत करेगे।

दूसरे दिन का दोपहर के पूर्व का समय था। महाराज शिवाजी भवानी की पूजा करके उठे ही थे कि उन्हे मामलेकर के आने की सूचना दी गई। वे वाहर निकल आये। मामलेकर सामने ही खडे थे।

शिवाजी ने मामलेकर से प्रश्न किया—कहो मामलेकर, अभियान कैसा रहा ?

मामलेकर ने उत्तर दिया—बहुत ही सफल रहा, महाराज ! वहलोल खा अपने सनिको के साथ पडाव छोडकर भाग गया। मुगल सैनिक अब फिर कभी इस ओर आख उठाकर देखने का साहस नही करेगे। वे लडाई का वहुत-सा सामान भी छोड गये थे।

शिवाजी मामलेकर की प्रशसा करने ही जा रहे थे कि उनकी दृष्टि एक डोले पर पडी, जो कुछ दूर पर रखा हुआ था और जिसके दोनो ओर पर्दा लटक रहा था।

शिवाजी ने विस्मयभरी दृष्टि से डोले की ओर देखते हुए प्रश्न किया—मामलेकर, यह डोला कैसा है ? इसमे कौन है ?

मामलेकर ने सिर झुकाकर उत्तर दिया—महाराज, वहलोल

बडा कायर था। वह स्वय तो प्राण बचाकर भाग गया, पर अपनी बेगम और कुरान को छोड गया था। बेगम बडी सुन्दर है, महाराज! उसकी सुदरता के समक्ष स्वर्ग की अप्सराए भी लज्जित हो जाती हैं। मै उसे आपके लिए लाया हू। आप उसे देखेगे, तो आह्लादित हो जायेगे। डोले मे बेगम कुरान के साथ बैठी हुई है।"

शिवाजी मामलेकर की बात सुनकर विचारो मे डूब गये। वे कुछ क्षणो तक मन-ही-मन सोचते रहे। फिर धीरे-धीरे डोले की ओर चल पडे।

शिवाजी डोले के पास जाकर खडे हो गये। उन्होने डोले पर पडे हुए पर्दे को उठा दिया। बेगम डर से सिकुडकर बैठी हुई थी। उसके पास ही कुरान की पुस्तक भी रखी हुई थी।

शिवाजी कुछ क्षणो तक बेगम की ओर देखते रहे। फिर मृदुलवाणी मे बोले—"बेगम, डरो नही, तुम भवानी के पुत्र शिवाजी के सामने हो। शिवाजी दूसरो की स्त्रियो को अपनी मा और बहन के ही समान पूज्य समझता है। बाहर निकलो, कुरान भी लेती आओ।"

बेगम हाथ मे कुरान लेकर बाहर निकल आई, शिवाजी के सामने खडी हो गई। शिवाजी उसे नीचे से लेकर ऊपर तक देखने लगे। सचमुच वह अतीव सुदर थी। उसकी सुदरता चन्द्रमा को भी लज्जित करने वाली थी। शिवाजी सोचते हुए बोल उठे— "बेगम, सचमुच तुम बहुत सुदर हो, यदि मै तुम्हारे पेट से पैदा हुआ होता, तो मै भी तुम्हारे ही समान सुदर होता!"

बेगम लज्जित हो उठी। शिवाजी की दृष्टि अब मामलेकर की ओर थी। उन्होने मामलेकर की ओर देखते हुए कहा— "मामलेकर, तुम मेरी सेना के सरदार हो, बहुत दिनो से मेरे साथ हो, पर दु ख है, तुम मुझे पहचान नही सके। मुगल मेरे शत्रु

हैं, पर मेरी शत्रुता मुगलो के अत्याचारो से है, उनसे और उनके धम से नही। उनकी स्त्रिया मेरे लिए उतनी ही पूज्य हैं, जितनी मेरी मा। मैं उनके धम और उनके धम-ग्रथ का भी अपने धर्म और धर्म-ग्रथ के समान आदर करता हू। तुमने बहलोल की बेगम और कुरान को मेरे पास लाकर मेरी मानवता का अपमान किया है। मैं तुम्हें दण्ड दूगा।"

मामलेकर का मस्तक शिवाजी के सामने झुक गया।

शिवाजी ने बेगम के हाथ से कुरान लेकर उसे मस्तक से लगाते हुए कहा—"मामलेकर, तुम्हारे लिए दण्ड यही है कि तुम बेगम और कुरान को आदरपूवक बहलोल के पास पहुचा दो। सावधान, यदि बेगम और कुरान का अपमान हुआ, तो तुम्हारे भी प्राण नही रहेंगे।"

मामलेकर ने शिवाजी की आज्ञा का पालन किया। बहलोल अपनी बेगम और कुरान को पाकर हर्ष से फूला नही समाया। उसकी दृष्टि मे शिवाजी का स्थान इतना ऊचा बन गया कि देवता भी वहा नही पहुच सकते थे।

बहलोल ने शिवाजी के पास पत्र भेजकर उनसे प्रार्थना की कि वह उनसे मिलना चाहता है, उन्हें देखना चाहता है।

शिवाजी बहलोल की प्रार्थना पर उससे मिले। वह उनके चरणो पर गिर पडा और बोला—"महाराज, आप मनुष्य नही, फरिश्ते हैं। हूरो के समान सुदर स्त्री को पाकर उसे ठुकराने का साहस फरिश्तो को छोडकर और किसी मे नही होता। महाराज, आपको देखने के बाद मैं और अब किसी इन्सान को देखना नही चाहता। खुदा को देखने के बाद सबको देखने की इच्छा समाप्त हो जाती है।"

बहलोल अपने ही हाथो अपनी हत्या करने के लिए तैयार हो उठा, पर शिवाजी ने उसे पकड लिया। उन्होने कहा—"बहलोल,

यदि तुम मेरा आदर करते हो, तो जीवित रहो और हिन्दुओ और मुसलमानोंकी एकता के लिए प्रयत्न करो। अपने धर्म का आदर तो करो ही, दूसरो के भी धर्मों का आदर करो। क्योकि सबका ईश्वर एक ही है।"

बहलोल ने शिवाजी से हाथ मिलाते हुए कसम खाई—"महाराज, आपने हमारी आखें खोल दी। हम कुरान और खुदा की कसम खाकर कहते हैं, दूसरो की स्त्रियो को अपनी मा, दूसरो के धर्मो को अपना धर्म और हिंदुस्तान को अपना देश समझेगे।"

शिवाजी ने बहलोल को गले से लगा लिया, बडे प्यार से गले लगा लिया।

शरद जोशी

शेख तकी

सरनाम सिंह लगर मे रोटी खा रहा था। शेख तकी की नजर उस पर जा पडी, पर वह अपनी आख बचाकर चलता बना, उसने सोचा, कौन सकट मोल ले। पकडूगा, तो रिवाल्वर तान देगा। हो सकता है, गोली भी चला दे।

शेख तकी सब-इस्पेक्टर था। वह सरनाम सिंह को जानता था। कई बार घटना-स्थल पर उससे मुठभेड भी हो गई थी। बडा खतरनाक आदमी था।

सरनाम सिंह ने भी तकी को देख लिया। वह समझ गया कि तकी डर से आख बचाकर जा रहा है। वह रोटी छोडकर तकी के पीछे-पीछे चलने लगा।

कुछ दूर जाने पर एकात मे सरनाम ने आगे बढकर तकी के कधे पर हाथ रखा। तकी ने पीछे मुडकर देखा, सरनाम सिंह खडा था।

तकी बोल उठा—"क्या बात है ?"

सरनाम ने कहा—"मैं भी तुमसे यही पूछ रहा हू, क्या बात है ? आज क्यो आख बचाकर जा रहे हो ? मुझसे डर गये न ? अरे यार, तुम मुसलमान और मैं सिख। क्यो मुझसे झगडा करते हो ? मुझसे दोस्ती करो, मजे ही मजे रहेगे।"

तकी बोल उठा—"क्या बकते हो ? ' मैं इस्पेक्टर हू।"

सरनाम बोला—"जानता हू, खूब जानता हू। जानता न तो

कहना न। दिन-दिन भर गरीबो को फसाते रहते हो, दो-चार रुपये लेकर छोड दिया करते हो। मेरी वात मानो, माला-माल हो जाओगे।"

तकी से कुछ उत्तर देते नही वना। सरनाम कुछ देर तक चुप रहा फिर जेव से सौ-सौ रुपये के पाच नोट निकालकर हाथ मे लेकर वोला—"देखो तो यार, मेरे हाथ मे क्या है?"

तकी ने एक वार नोटो की ओर देखा और फिर कहा—"हा, दख तो रहा हू, तुम्हारे हाथ मे नोट है।"

सरनाम वोल उठा—"ये तुम्हारे लिए ही है।"

सरनाम ने नोटो को शेख तकी की जेव मे डाल दिया।

तकी न उसे कुछ रोका अवश्य, पर उसके रोकने मे दृढता नही थी।

सरनाम हस उठा। उसने हसते हुए तकी के कधे पर हाथ रखकर कहा—"यह तो कुछ नही है, इतने नोट दूगा कि सदूक मे रखने की जगह भी नही रहेगी।"

तकी ने कुछ उत्तर नही दिया। जिस तरह अच्छे चारे और दाने के लोभ मे विगडैल पशु भी अपने को वधा लेता है, उसी प्रकार तकी ने भी अपने आप को सरनाम के हाथो मे दे दिया। उसी दिन मे सरनाम और तकी की मित्रता की गाठ जुड गई।

सरनाम पच्चीस-छब्बीस वष का पढा-लिखा युवक था। खालिस्तान का समर्थक था। हर महीने उसके पास विदेशो से रुपया आता था। किन-किन देशो से रुपया आता था—कुछ कहा नही जा सकता, पर रुपया आता था और काफी आता था। वह उस रुपये से प्रचार करता था, अपने साथियो की सख्या वढाता था। हत्या और लूट मे आतक भी पैदा किया करता था।

शेख तकी पहले तो सरनाम को वदी वनाने की ताक मे रहा करता था, पर जव नोटो ने उसके मन को वाध लिया, तो

वह अपने कर्तव्य को भूलकर उसको सहायता करने लगा, हत्या और लूट मे उसका हाथ बटाने लगा।

सरनाम रुपयो से शेख तकी की जेब गरम करने लगा। तकी अपने घर को रुपया से ही नही, अच्छे अच्छे सामानो से भी भरने लगा। कभी पलग, कभी सोफा सेट, कभी रेडियो, कभी टेलीविजन और कभी टेपरिकाड। उसका छोटा-सा घर सामाना मे भरता जा रहा था, पर उसकी कामना की प्यास मिटती नही थी। उसने अपनी प्यास को मिटाने के लिए अपने देश, अपने मजहब और अपने खुदा को भी दाव पर लगा दिया था।

अपने घर को तरह-तरह के सामानो से सजता हुआ देखकर तकी की बीवी फूली नही समाती थी। वह खुदा के प्रति शुक्रिया प्रकट किया करती थी, पर पन्द्रह-सोलह वर्ष की आयशा के मन मे सदेह और चिता पैदा हुआ करती थी। वह तकी की पुत्री थी, विश्वविद्यालय मे पढती थी। वह अपने पिता को तरह-तरह के सामान लाता हुआ देखकर सोचा करती थी—पिताजी यह सब कहा से लाते हैं ? क्या उनकी तरक्की हो गई है, पर तरक्की तो दस-पाच रुपये की होती है। पिताजी तो हजारो का सामान लाते हैं। रिश्वत तो नही लेते, पर रिश्वत भी तो रोज रोज नही मिलती। फिर क्या कोई काला धधा करते है ? यदि पकडे गये, तो क्या होगा ? इज्जत तो खाक मे मिल ही जायेगी, नौकरी भी छूट जायेगी और हम सबको भूखो मरना पडेगा।

आयशा प्राय प्रतिदिन चिता के साथ सोचा करती थी, पर उसे कोई उपाय समझ मे नही आ रहा था। वह मन-ही-मन छटपटाया करती थी, पर उसे अधेरे से बाहर निकलने का कोई रास्ता नही सूझ रहा था। उसने दो-एक बार अपनी मा के ध्यान को इस ओर खीचने का प्रयत्न किया, पर उसकी मा तो अपने शौहर की आमदनी को खुदा का शुक्र समझ रही थी। ध्यान देने

को कौन कहे, उसने आयशा की वात को सुन करके भी नही सुना।

आखिर, आयशा ने अपने पिता से ही पूछने का निश्चय किया।

रात के आठ वज रहे थे। आयशा ने अपने पिता के सामने खाने की प्लेट रखते हुए कहा—"पिताजी, एक बात पूछू, वताइयेगा ?"

तकी वोला—"पूछो, जरूर वताऊगा।"

आयशा ने धीमे स्वर मे कहा—"पिताजी, आप रोज़-रोज इतना कीमती सामान कहा से लाते है ? क्या आपकी तरक्की हो गई है ?"

तकी ने जवाव दिया—"यही समझलो।"

आयशा वोली—"तरक्की दस-वीस रुपये की हुई होगी, पर सामान तो आप कीमती लाते हैं।"

तकी खीझ भरे स्वर मे बोल उठा—"तुम्हारा क्या मतलव है ? समझ लो, मैं चोरी करता हू। आज पूछा तो पूछा, फिर कभी ऐसे सवाल मुझसे मत करना। जाओ अपना काम करो।"

आयशा अपने कमरे मे जाकर चारपाई पर पड गई, सिसक-सिसक कर रोने लगी। उसकी समझ मे वात आ गई कि उसका वाप गलत काम करता है—या तो तस्करो से मिला है, या उन लोगो से मिला है, जो देश का विभाजन चाहते है, जो वाहर से धन लाकर देश मे विप्लव की आग जलाना चाहते हैं। अवश्य एक-न-एक दिन उसका पिता पकडा जायेगा। पकडे जाने पर उसे जेल की सजा तो मिलेगी ही, फासी भी हो सकती है, पर कौन समझाये उसके पिता को ? ऐसा धन किस काम का, जो सकट को वुलावा देता है।

आयशा पूरी रात विलखती रही, चिता के साथ सोचती

शरद जोशी

रही। थोडी देर के लिए जब झपकी लग जाती थी, तो बुरे-बुरे स्वप्न देखने लगती थी—मानो उसके पिता के हाथो मे हथकडी पडी है, पैरो मे बेडी पडी है। वह फासी पर चढ रहा है। उसकी मा कलाई की चूडिया तोड रही है, छाती पीट-पीटकर विलाप कर रही है और वह तथा उसका छोटा भाई दोनो भीख माग रहे हैं। दाने-दाने के लिए तरस रहे है।

आयशा बडी देर तक चारपाई पर पडी रही। जब उठी, तो सवेरे के नौ बज रहे थे। रविवार का दिन था। विश्वविद्यालय बन्द था। आयशा नहा-धोकर रभा के घर की ओर चल पडी। रभा उसकी सहेली थी। उसके साथ पढती थी। दोनो के नाम अलग-अलग थे, धर्म और जाति भी अलग अलग थी, शरीर भी अलग अलग था, पर दोनो एक प्राण के समान थे। दोनो के स्नेह और मित्रता को उनके माता-पिता भी खब जानते थे।

आयशा जब रभा के घर पहुची, तो रभा के पिता शम्भूनाथ रभा और अपनी पत्नी के साथ बैठकर नाश्ता कर रहे थे। वे गुप्तचर विभाग के बहुत बडे अफसर थे। वे आयशा को देखते ही बोल उठे—"आओ, बेटी आयशा, नाश्ता करो।"

आयशा मेज के पास कुर्सी पर बैठ गई। उसका चेहरा और उसकी आखें गम से भरी हुई थी। बादल छाये हुए थे, पर वर्षा नही हो रही थी।

शम्भूनाथ ने आयशा के चेहरे की ओर देखते हुए कहा—"क्या बात है बेटी ?"

जिस प्रकार हवा के सहलाने से बादल बरसने लगते है, उसी प्रकार शभूनाथ के स्नेह भरे शब्दो से आयशा की आखो से आसू गिरने लगे। शम्भूनाथ ने उसे अपनी गोद की ओर खींचते हुए कहा—"क्यो रोती हो बेटी, मैं तो मौजूद ही हू। बताओ, क्या हुआ है, तुम्हारे मन को किसने और क्यो दुखाया है ?"

मरन हृदय और भोली-भाली आयशा ने सब कुछ शम्भूनाथ को बता दिया। वह आसू बहाती हुई बोली—"चाचाजी, पिताजी को समझाइए। वे गलत काम करना छोड दे।"

शम्भूनाथ सोचने लगे। उन्होने सोचते-सोचते कहा—"आयशा, मुझे अफसोस है, तुम्हारे पिता के विरुद्ध कई रिपोर्ट हो चुकी है। वे खालिस्तानिया से मिले हुए है। धन के लोभ मे देश को बेच रहे हैं। उनकी गिरफ्तारी के लिए वारट निकलने ही वाला है, पकडे जाने पर जेल तो होगी ही, फासी की सजा भी हो सकती है।"

आयशा चीख उठी—"चाचाजी, पिताजी को बचाइये। हम सब कही के नही रहेगे।"

शम्भूनाथ सोचने लगे। आयशा के आसू उनके हृदय मे तीर की तरह घुसते जा रहे थे। वे अपने रूमाल से उसके आसुओ को पोछते हुए बोले—"बेटी आयशा, एक ही उपाय है। शेख तकी को राजी करो कि वे उन लोगो का भेद हमे बता दे, जो लूट और हत्या के द्वारा देश मे आतक पैदा कर रहे हैं। हम उन्हे गिरफ्तार करके तुम्हारे पिताजी को बचा लेगे।"

और आयशा के आसुओ ने ही शेख तकी को सही रास्ते पर ला दिया। उसने अपनी गलती मान कर शम्भूनाथ को सारा भेद बता दिया। शम्भूनाथ ने पूरे गिरोह को गिरफ्तार कर लिया। उन्होने मुकदमे का जो कागज-पत्र तैयार किया, उसमे शेख तकी का नाम तक नही था।

शेख तकी ने शम्भूनाथ के चरणो पर गिरते हुए कहा—"पडित जी आपने मुझे बचा लिया। मैं आपके उपकार को कभी नही भूलूगा।"

शम्भूनाथ ने उत्तर दिया—"मैंने नही बचाया, शेख साहब, बचाया आयशा के पवित्र आसुओ ने। शेख साहब, धन के लोभ मे देश को बेचना पाप है। दूसरे पाप करने पर तो मनुष्य की

मुक्ति हो भी जाती है, पर जो मनुष्य देश के साथ दगा करता है, उसकी मुक्ति कभी भी नही होती। आज तो आयशा के आसुओ ने आपको बचा लिया, पर अब फिर ऐसा काम कीजियेगा, तो आयशा के आसू भी खुदा को मेहरबान नही कर सकेंगे।"

शेख वकी का मस्तक झुक गया, बहुत नीचे तक झुक गया।

जोई राम, सोई रहीम

अब्दुल्ला और सूरजदीन दोनो पडोसी थे। अब्दुल्ला रहीम का नाम लेता था, सूरजदीन राम का नाम जपता था। अब्दुल्ला नमाज पढता था, सूरजदीन मूर्ति की पूजा करता था। अब्दुल्ला ईद को अपना त्योहार मानता था और सूरजदीन दीवाली को अपना पर्व मानता था, पर दोनो मे मित्रता थी। दोनो एक-दूसरे के दुःख-सुख मे भाग लेते थे।

अब्दुल्ला के घर जब कोई उत्सव होता था या कोई खुशी मनाई जाती थी, तो वह सूरजदीन को अवश्य बुलाता था। इसी तरह जब सूरजदीन के घर कोई तीज-त्योहार पडता था, तो वह अब्दुल्ला को बुलाये बिना नही रहता था। दोनो केवल पडोसी थे, केवल मनुष्य थे। हिन्दू और मुसलमान बिल्कुल नही थे। या कहना चाहिए, दोनो सच्चे हिन्दू और सच्चे मुसलमान थे।

सयोग की बात अब्दुल्ला हज करने के लिए मक्का शरीफ गया। सूरजदीन ने बडे प्रेम से उसे गाडी पर बिठाया था। उससे कहा था—"भाई अब्दुल्ला, मेरी खैरियत के लिए भी दुआ कर देना।"

दो-तीन मास के पश्चात् जब घर लौटकर आया, तो सूरजदीन ने उसके घर जाकर उसे गले से लगा लिया था, उसके मस्तक को चूम लिया था, पर उसे अब्दुल्ला कुछ बदला हुआ भी दिखाई दे रहा था। वह प्रेम से मिला तो, पर उसके प्रेम मे खिचाव नही था।

एक मास के पश्चात एकादशी पडी। सूरजदीन एकादशी को व्रत रहता था, सत्यनारायण की कथा का आयोजन किया करता था। उस दिन भी उसने व्रत रखा था, सत्यनारायण की कथा का आयोजन भी किया था।

सूरजदीन ने सबको बुलाया था, अब्दुल्ला को भी बुलाया था। वह हर कथा पर उसे बुलाया करता था। सब तो आये, पर अब्दुल्ला नही आया।

सूरजदीन को बडा आश्चय हुआ। भेंट होने पर उसने अब्दुल्ला से पूछा—"क्या भाई अब्दुल्ला, तुम कथा मे क्यो नही आये ? ऐसा तो कभी नही हुआ था। यह पहली ही बार हुआ है।"

अब्दुल्ला ने जवाब दिया—"हा, यह पहली ही बार हुआ है।"

सूरजदीन बोला—"क्या जान सकता हू ऐसा क्यो हुआ ?"

अब्दुल्ला बोला—"देखो भाई, बुरा मत मानना। तुम हिन्दू हो, मूर्ति की पूजा करते हो, हम मुसलमान हैं। मूर्ति की पूजा को धम के विरुद्ध समझते हैं। तुम्हारी कथा मे हम इसीलिए नही आये, कथा मे मूर्ति की पूजा होती है।"

सूरजदीन विचारा मे डूब गया। कुछ देर तक सोचता रहा, फिर सोचता हुआ बोला—"पहले तो तुम ऐसा कभी नही समझते थे। कथा मे आते थे और प्रसाद भी लेते थे।"

अब्दुल्ला ने जवाब दिया—"उस समय मुझे इस बात का ज्ञान नही था।"

सूरजदीन समझ गया, अब्दुल्ला मे यह परिवतन मक्का शरीफ जाने से हुआ है। वह चुप रह गया। बोल-चाल अब भी दोनो मे थी, पर पहले की तरह व्यवहार नही था। अब्दुल्ला अब अपने को कट्टर मुसलमान समझने लगा था। वह समझने लगा था कि उसका धम इस्लाम है, जो सूरजदीन के धर्म से अलग है।

कुछ दिन पश्चात् अब्दुल्ला ने मौलुदशरीफ का आयोजन किया। उसने सूरजदीन को नही बुलाया, पर फिर भी सूरजदीन उसमे गया। मौलवी अपने ढग से कथा कह रहा था। कथा के साथ ही टीका-टिप्पणी भी कर रहा था। था तो मौलवी पर आज के रग मे रगा हुआ था।

मौलवी टीका टिप्पणी करता हुआ बोला—"लोग कहते है, राम और रहीम एक हैं, पर मेरी समझ मे यह केवल प्रचार है। राम और रहीम एक नही हो सकते। रहीम खुदा को कहते हैं और राम एक साधारण अवतार है। भला अवतार खुदा के बराबर कैसे हो सकता है? लोग यह भी कहते है कि एक ही खुदा सब मे निवास करता है। बात बडी अच्छी है। इससे दुनिया मे भाई-चारा फैल सकता है, पर मुसलमानो के लिए यह बात अच्छी नही है। यदि मुसलमान इस बात को मान लेंगे, तो उनकी विशेषता नष्ट हो जायेगी। अत मुसलमानो को ऐसे विचारो से अपने को दूर ही रखना चाहिए।"

एक ओर कोई बोल उठा—"मौलवी साहब, आप तो पाक के रेडियो की तरह बोल रहे हैं। लाहौर का रेडियो प्रतिदिन यही कहता है, पर आपको जानना चाहिए कि आप पाक मे नही हिंदुस्तान मे बोल रहे हैं, जहा हिंदू और मुसलमान आपस मे भाई-भाई की तरह रहते हैं।"

आवाज़ फातिमा की थी। पन्द्रह-सोलह वर्ष की लडकी युनिवर्सिटी मे पढती थी। हिंदुस्तान को अपना वतन समझती थी। थी तो मुसलमान, पर हिन्दू और सिख को अपना भाई समझती थी। गाधी जी के भजन को बडे प्रेम से गाया करती थी—"जोई राम, सोई रहीम। जोई कृष्ण, सोई करीम।"

फातिमा अब्दुल्ला की भाजी थी। अब्दुल्ला ने उसे डाट कर चुप कराने का प्रयत्न किया, पर वह चुप नही हुई, बोली—

"मामू, मौलवी साहब बिल्कुल गलत कह रहे हैं। यदि उनकी बात को हमारे देश के हिन्दू और मुसलमान मान लें, तो क्या होगा ? क्या उससे एकता नष्ट नही हो जायेगी, शान्ति अशान्ति के रूप मे नही बदल जायेगी ? मामू, हम मजहब और खुदा के नाम पर ऐसी बातें नही सुनना चाहते, नही सुनना चाहते।"

कथा मे खलबली मच गयी, मौलवी साहब उठकर चले गये। किसी ने फातिमा को अच्छा कहा, किसी ने बुरा कहा। सूरजदीन ने उसके मस्तक पर हाथ रखते हुए कहा—"बेटी फातिमा, तुमने बडे साहस का काम किया। यदि तुम्हारी ही तरह लडकिया घर-घर मे पैदा हो जाए, तो हिन्दुस्तान से वैर और विरोध भाग जाये।"

अब्दुल्ला बोला तो कुछ नही, पर उसी दिन से उसके मन मे द्वन्द्व पैदा हो गया। वह प्राय सोचने लगा—"मक्का शरीफ के मौलवी ने कहा था—तुम मुसलमान हो, तुम्हारा मजहब इस्लाम सब मे बडा है। देश के मौलवी भी यही कहते हैं, पर बडे-बडे नेता कहते हैं, कोई न तो बडा है, न तो छोटा है। सभी मज़हब एक समान हैं, सब मे एक ही खुदा है। क्या सच है, क्या झूठ है- कुछ समझ मे नही आता। या खुदा तू ही मेहरबान हो, मुझे समझा, मैं किसकी बात मानू ?"

जाडे के दिन थे। अब्दुल्ला दुलाई ओढकर सोया हुआ था। स्वप्न देखने लगा—सामने एक बुजुर्ग खडे हैं। बडी-बडी सफेद दाढी है, सफेद ही बाल हैं। मुसकराते हुए कह रहे हैं—"अब्दुल्ला, झगडे मे मत पडो। बस एक ही बात समझो—खुदा एक है, सब मे एक ही खुदा का वास है। गाधी जी ठीक कहते हैं—

जोई राम, सोई रहीम। जोई कृष्ण, सोई करीम।"

अब्दुल्ला दुलाई फेंककर उठ पडा और सूरजदीन के घर जाकर उसका दरवाजा खुलवाकर उसके गले से लिपट गया, आसू

चहाता हुआ बोला—"भाई सूरजदीन, मुझे क्षमा कर दो। मैं अपने रास्ते से नहक गया था। खुदा ने मुझे फिर सच्चे रास्ते पर ला दिया। सच यही है—राम-रहीम एक हैं, हिन्दू, मुसलमान, सिख—सब में एक ही खुदा की ज्योति है।"

सूरजदीन ने अब्दुल्ला को गले से लगा लिया, बड़े प्रेम से गले से लगा लिया।

जोई कृष्ण, सोई करीम

सन्ध्या के पश्चात् का समय था। दिल्ली के एक मुहल्ले मे श्रीमद्-भागवत् की कथा हो रही थी। रत्नजटित सिंहासन पर श्रीकृष्ण की मूर्ति रखी हुई थी—मनमोहिनी मूर्ति, प्राणो को लुभाने वाली मूर्ति। त्रिभगी शरीर, हाथो मे मुरली, पीत वसन, घुघराले बाल, सिर पर टोपी और कमर मे काछनी। बडी अदा से खडे थे। देखते ही मन लुट जाता था। कथा भी बडी मधुवर्षिणी थी। कानो की राह से भीतर घुसकर अमृत घोल रही थी।

पठानवश मे जन्मे युवक रसखान ने जब कृष्ण की मूर्ति देखी, तो देखते ही मोहिनी छवि भीतर समा गई। बहुत दूर इरान मे पैदा हुए थे, न कभी नाम सुना था, न देखा था। मजहब इस्लाम था, मा मुसलमान, बाप भी मुसलमान। न कभी यमुना मे डुबकी लगाई थी, न कभी किसी मदिर मे गये थे, पर जब कृष्ण की छवि देखी, तो देखते ही लुभा गये। ऐसा लगा उन्हे, मानो युग-युगो की पहचान हो। टकटकी लगाकर देखने लगे, रह रहकर देखने लगे। नयन चिपक से गये थे, हटते ही नही थे।

कथा जब खतम हुई, तो व्यास के पास जाकर बोले—"पडित जी, मनमोहन कहा मिलेगे?" व्यास ने उत्तर दिया—"घट-घट मे। वृन्दावन मे यमुना के किनारे गैया चराते है, ग्वालो की छोहरियो से दही और मक्खन छीनकर खाते हैं। गोकुल मे जन्मे थे।"

रसखान दिल्ली से गोकुल जा पहुचे। सोचा, गोकुल मे जन्मे

थे, वही रहते भी होगे। बडे मजे मे भेट हो जायेगी।

न किसी से जान, न किसी से पहचान। न रहने का ठिकाना, न खाने का प्रबन्ध। केवल गोकुलनाथ का सहारा। गोकुल मे पहुचकर गोकुलनाथ के मदिर मे जाने लगे।

वेश पठान का, सूरत-शक्ल भी पठानो की-सी। मदिर के दरबान ने रोक दिया—"विधर्मी हो, यवन हो। मदिर के भीतर नही जा सकते।"

रसखान चकित हो उठे—"यह कैसी बात ? प्रेम पर रीझने वाले गोकुलनाथ के दरबार मे यह भ्रम और विभ्रम कैसा ? यह हिन्दू और यवन का भेद कैसा ? पर नही, यह भेद तो मनुष्यो का किया हुआ है, कृष्ण का नही।"

रसखान मदिर के पीछे चले गये। कुड के पास बैठ गये—चाहे जो हो, सास ही क्यो न टूट जाए, जब तक गोकुलनाथ अपने पास नही लायेगे, यहा से नही हटूगा।

प्रेम पर रीझने वाले गोकुलनाथ काप उठे। रात हुई, तो स्वप्न मे पुजारी से प्रकट होकर बोले—"मेरा प्रेमी रसखान मदिर के पीछे कुड के पास बैठा हुआ है। सवेरा होते ही आदरपूर्वक उसे मेरे पास ले आओ। नही तो, सारे गोकुल को यमुना की लहरो मे डुबो दूगा।"

पुजारी ने निवेदन किया, "पर दीनानाथ वह तो यवन है, मुसलमान है।"

गोकुलनाथ बोल उठे—"तो क्या हुआ ? मेरे लिए न कोई हिन्दू है, न कोई मुसलमान। मुझ से जो प्रेम करता है, वही मेरा है। और जो अपना सब कुछ मुझ पर निछावर कर देता है, मैं उसी का हू।"

पुजारी की आख खुल गई, सोचने लगा—कैसी अद्भुत लीला है कृष्ण की। मुसलमानो ने मदिर तोडे, मूर्तिया तोडी, पर

रसखान के प्रेम मे सब कुछ भूल गये।

सवेरा होते ही पुजारी मदिर के पीछे कुड के पास जा पहुचा। रसखान से बोला—"महिमामय, मदिर के भीतर चलिए, मुरलीधर ने याद किया है। नही चलिएगा, तो गोकुल को यमुना की लहरो मे डूबो देंगे।"

रसखान की आखे गगा-जमुना बन गईं। सुबकते सुबकते पुजारी के साथ मदिर के भीतर गये। देखते ही गोकुलनाथ ने दोनो हाथ फैला दिये। रसखान मूर्ति की ओर दौड पडे। पुजारी ने पकड न लिया होता, तो पत्थर के फर्श पर गिर पडते।

रसखान कई दिनो तक गोकुल मे रहे, फिर वृ दावन मे जाकर, कृष्ण-कुज मे बैठकर प्रेम के गीत गाने लगे—

मानुष हौं तो वही रसखान, बसौं ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो, चरौं नित नद की धेनु मँझारन॥
जो खग हौं तो बसेरो करौं, नित कालिदी फूल कदब को डारन।
पाहन हौं तो वही गिरि को, जो धर्यो कर छत्र पुरदर धारन॥

रसखान के रस भरे गीत हवा मे उडते हुए दिल्ली के सुल्तान के भी कानो मे पड। वह अप्रसन्न हो उठा—कैसा मुसलमान है? हिन्दुओ के कृष्ण के प्रेम के गीत गाता है। दोज़ख मे जायेगा।

सुल्तान ने रसखान के पास सदेशा भेजा—कृष्ण के प्रेम के गीत गाना छोड दो। गाना ही चाहते हो, तो खुदा के प्रेम के गीत गाओ, नबी के प्रेम के गीत गाओ।

पर रसखान के ऊपर सुल्तान की बात का प्रभाव बिल्कुल नही पडा। उन्होने सुल्तान के सदेश का उत्तर दिया—जो खुदा है, वही कृष्ण है। जो कृष्ण है, वही खुदा है, वही करीम है। मैं कृष्ण के प्रेम के रूप मे खुदा के ही प्रेम के गीत गाता हू। मैंने खुदा और कृष्ण के भेद को भली प्रकार समझ लिया है। आप भी कृष्ण

को ख ुदा समझकर उनसे प्रेम करें। कल्याण का यही रास्ता है, शान्ति का यही मार्ग है।

सुल्तान कुपित हो उठा। उसने सिपाहियो को आदेश दिया—"जाओ, रसखान का सिर काटकर फेंक दो।"

शाही सिपाही वृन्दावन मे रसखान के पास जा पहुचे। रसखान प्रेम मे डूबकर गा रहे थे।

"या लकुटी अरु कामरिया पर,
राज तिहुँपुर को तजि डारी।"

सिपाही गरज उठे—ब न्द करो इस गीत को, नही तो सिर काटकर फेक देंगे। रसखान ने सिर झुका दिया। बोले—"कृष्ण के लिए सिर हाज़िर है। काटकर फेक दो, पर कृष्ण के प्रेम का गीत वन्द नही होगा, ब न्द नही होगा।"

सिपाहियो की तलवारे एक साथ ही ऊपर उठ गई, पर सुनते हैं वे नीचे रसखान की गर्दन पर नही गिरी, नही गिरी।

सिपाही लज्जित होकर, रसखान से क्षमा मागकर दिल्ली लौट गये।

रसखान काफी दिनो तक वृन्दावन मे रहे, अपने सवैया और कवित्तो से प्रेम का सागर बहाते रहे, तत्पश्चात महावन मे चले गये, झोपडी बनाकर रहने लगे, अपने सरस गीतो से धरती और आकाश को गुजाने लगे।

कृष्ण के प्रेम के गीत गाते ही गाते रसखान कृष्ण मे मिल गये। उनकी कब्र आज भी महावन मे बनी हुई है।

रसखान की कब्र के पास ही एक और भी कब्र है—ताज की। ताज भी मुसलमान थी, रिश्ते मे रसखान की बहन लगती थी। उ न्होंने भी कृष्ण के चरणो पर अपना सब कुछ निछावर कर दिया था—

"नन्द के कुमार कुर्बाण ताणी सूरत पर,
हौं तो तुर्कानी हिन्दुआनी हौं रहूगी मैं।"

दोनो कब्रे आज भी भावात्मक और राष्ट्रीय एकता का सदेश दे रही है। काश, हिन्दू और मुसलमान रसखान और ताज के जीवन से प्रेरणा लेते, आपस मे मिलजुलकर रहते।

सत्य का चमत्कार

साठ रामठ वर्ष का जीवनसिंह बढईगीरी करता था। रोज सवेरे नहा-धोकर गुरुग्रन्थ साहब का पाठ करता, फिर कुछ खा-पीकर घर से निकल जाता था। दिन भर गली-गली घमता, टूटी चारपाइया, तख्ते और कुर्मियो की मरम्मत किया करता था। दिन भर मे बीस-पचीस रुपये प्राप्त हो जाते थे। घर मे दो ही प्राणी थे, बडे मज़े मे निर्वाह हो जाता था।

जीवनसिंह के जीवन मे एक पुत्री को छोडकर और कोई नही था। पुत्री का नाम बादला था, बिल्कुल बादलो के-से रग वाली, गभीर स्वभाव वाली, बहुत ही कम बोलती थी। वृद्ध पिता को आराम देने मे कसर नही करती थी। सवेरे-शाम रोटी बनाती थी, घर का सारा काम-काज भी करती थी। जीवनसिंह रोज जो रुपये लाता था, बादला के हाथो पर रख दिया करता था। बादला ही आटा, दाल, चावल और साग-सब्ज़ी खरीदकर लाया करती थी।

यो तो बादला बडी खुश रहती थी, पर कभी-कभी चिन्तित हो जाती थी — शादी होने पर जब मैं यहा से चली जाऊगी, तो कौन रोटिया बनाकर बाबा को खिलायेगा। उनके लिए कौन घडे मे पानी भरकर लायेगा ?

बादला विवाह के योग्य हो गई थी। जीवन उसके लिए खोजने की चिन्ता मे डूबा रहता था। सोचता था, कोई

और योग्य वर मिले, तो उसके हाथ मे वादला का हाथ देकर निश्चित हो जाऊ। पर वहुत खोजने और ढूढने पर भी अपनी जाति विरादरी मे कोई ऐसा लडका दिखाई नही पडता था, जिसके हाथ मे जीवन वादला का हाथ देकर निश्चित हो जाता। जो भी लडका नजर में आता था, उसमें कोई-न-कोई खोट अवश्य निकल आती थी।

आखिर जीवन को एक लडका जच गया, वी० ए० पास था, मास्टरी करता था। नाम नरेन्द्र था, पर सनातनी हिन्दू था। पहले तो जीवन हिचकिचाया—एक गैर सिख लडके के साथ वादला की शादी कैसे हो सकती है पर फिर जीवन की हिचकिचाहट दूर हो गई। उसने सोचा, गुरुग्रन्थ साहव मे लिखा है, सभी मनुष्य एक ही ईश्वर के वन्दे हैं एक ही ज्योति से निकले हैं। जब सभी मनुष्य एक ही ज्योति से पैदा हुए हैं, तो फिर कैसा हिन्दू और कैसा सिख ?

जीवन ने वादला का विवाह नरेन्द्र के साथ कर दिया। वादला रोती हुई पिता के पैर छूकर ससुराल चली गई।

जीवन ने सोचा था, वादला की शादी नरेन्द्र के साथ करके उसने कोई अनुचित काम नही किया है, पर इस बात को लेकर जाति-विरादरी मे वडा तूफान खडा हुआ। जिसे देखो, वही कहता हुआ दिखाई पडता था—जीवन ने सिखो की नाक काट ली। उसने अपनी वेटी मोने के घर मे व्याह दी है। पाठ तो रोज़ गुरु-ग्रन्थ साहव का करता है पर उसने गुरु के नाम पर वट्टा लगाया है। उसे सजा मिलनी चाहिए।

जाति विरादरी के लोगो ने पथ के ग्रथी के पास शिकायत की। ग्रथी ने सवके सामने जीवन को बुलाकर उससे पूछा—"क्यो जीवन, क्या यह सच है, तुमने अपनी वेटी का विवाह हिन्दू के साथ किया है ?"

जीवन ने उत्तर दिया—"हा, यह सच है। जब मुझे अपनी जाति-बिरादरी में कोई योग्य लडका नही मिला तो मैंने उसके लिए दूसरी जाति मे वर देखना प्रारभ किया। उसे अपनी जाति-बिरादरी के किसी अयोग्य लडके के हाथ मे सौंपकर क्या उसका जीवन नष्ट करता? मुझे नरेन्द्र जच गया, तो मैंने बादला का हाथ उसके हाथ मे दे दिया। करता तो क्या करता?"

ग्रथी ने कहा—"पर तुमने ठीक नहीं किया। क्योकि किसी दूसरे धर्म मे पुत्री का विवाह करना अधर्म है। तुमने अधर्म किया है, तुम्हे पथ की ओर से दड मिलेगा।"

जीवन बोला—"मैंने कोई अधर्म नहीं किया है। गुरुग्रन्थ साहब मे लिखा है—सभी मनुष्य एक ही ईश्वर के बन्दे है, फिर कैसा हिन्दू और कैसा सिख? फिर जितने सिख हैं वे सब पहले हिन्दू ही तो थे। हिन्दू और सिख दोनो गगा को पवित्र मानते है, राम का नाम लेते हैं, कृष्ण का कीर्तन करते हैं। दोनो ही हरि, वैकुठ, स्वर्ग, ब्रह्म और जीव का नाम लेते हैं। फिर सिख और हिन्दू मे भेद कैसा?"

पर पथ के ग्रथी ने जीवन की बात नही मानी। उन्होंने कहा—"यदि तुम्हारी ही तरह और भी सिख करने लगे, तब तो सिख जाति पर सकट आ जायेगा। मैं तुम्हे दड देता हू। तुम गुरुग्रन्थ साहब का पाठ कराओ और पाच सौ मनुष्यो का लगर दो।"

जीवन बोला—"गुरुग्रन्थ साहब का पाठ तो मैं रोज करता हू। रही लगर देने की बात। वह मेरे बूते के बाहर का है। मैं रोज मजदूरी करता हू। पाच सौ मनुष्यो का लगर कैसे दे सकता हू।"

पर ग्रथी अपनी बात पर अडे रहे। उन्होंने कहा—"मैंने निर्णय कर दिया। तुम्हें मेरी बात माननी ही पडेगी।"

जीवन घर लौट गया। जाति-बिरादरी के लोग देखने लगे कि जीवन क्या करता है, पर जीवन ने न तो गुरुग्रन्थ साहब का

कराया और न लगर ही दिया। वह कई दिनो तक विचारो के द्वन्द्व मे फसा रहा। फिर बादला के घर जाकर उससे सलाह ली। बादला बोली—"बाबा, तुम गुरुग्रन्थ साहब का पाठ ता करते ही हो। लगर मत दो। यदि जाति-बिरादरी के लोग तग करे, तो हिन्दू बन जाओ। हिन्दू होने पर दड से बच जाओगे।"

बादला की सलाह जीवन को जच गयी। वह हिन्दू हो गया। जाति-बिरादरी से अलग हो गया।

पर हिन्दू होने पर भी रोज गुरुग्रथ साहब का पाठ करता था। पहले गुरुद्वारे की ड्योढी पर ही मस्तक टेकता था, पर अब मदिर की ड्योढी पर भी टेकने लगा। राम नाम पहले भी लेता था और अब भी लिया करता था। कोई अन्तर नही पडा, न जीवन मे न रहन-सहन मे। जैसे पहले, वैसे ही अब भी।

जीवन सोचने लगा—"यह कैसा प्रपच है—हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई। मजहब बदल देने पर कुछ तो नही बदलता। ईश्वर का नाम ज़रूर बदल जाता है, पर उसका गुण तो बिल्कुल नही बदलता। जो गुण हिन्दू के ईश्वर मे है, वही सिखो के गुरु मे है, वही मुसलमानो के खुदा और ईसाइयो के गॉड मे है।"

जीवन के मन मे ज्ञान पैदा हो उठा। उसका हृदय सत्य की ज्योति से आलोकित हो उठा। वह सब कुछ छोडकर साधु बन गया, विरक्त बन गया। घर-द्वार छोडकर एक झोपडी मे रहने लगा। गुरुग्रथ साहब के पाठ को छोडकर और कोई काम नही।

पर जाति बिरादरी के लोगो के मन मे ईर्ष्या की आग तो जल ही रही थी। जीवन ज्यो-ज्यो सचाई की राह पर चलने लगा त्यो-त्यो वह आग और भी तेज़ होने लगी, प्रखर होने लगी।

रात का समय था। जीवन अपनी झोपडी मे गुरग्रथ साहब का पाठ कर रहा था। सहसा पाच छ असामाजिक तत्त्व झोपडी मे जा पहुचे। वे जीवन का अपहरण करना चाहते थे। उसे खाक

मे मिला देना चाहते थे, पर ज्यो ही उन्होने जीवन को हाथ लगाया, न जाने कहा से तीन चार बडे-बडे सर्प आ गये, उनके पैरो से लिपट गये।

असामाजिक तत्त्व धरती पर गिर पडे, बेहोश हो गये। सवेरे चारो ओर खबर फैल गई। पुलिस के लोग भी पहुचे। असामाजिक तत्त्वो ने होश मे आने पर कहा—'यह सब सत्य का चमत्कार है। हम सब जीवन बाबा का अपहरण करने आये थे, पर न जाने कहा से आकर काले-काले सापो ने हमे घेर लिया। हम बेहोश होकर गिर पडे। हमे इस घटना ने सही रास्ते पर ला दिया। हमे पता चल गया कि हिन्दू और सिख दोनो एक हैं। जीवन बाबा ने अपनी पुत्री का विवाह हिन्दू के घर मे करके कोई बुरा काम नही किया, कोई बुरा काम नही किया।"

अरण्या

अरण्या पेडो से बेर तोड रही थी। काले रग की वनवासिनी थी। सिर पर खुले हुए वडे वडे वाल थे। लगोटी पहने हुए थी। झोपडी मे रहती थी, वेरो पर ही निर्वाह करती थी। बेरो के फल नही मिलते थे, तो साग-पात खाया करती थी।

ऋषि वज्रनाभ ने अरण्या के पास जाकर कहा—"बेर मत तोडो। यह हमारे हैं। तुम अछूत हो। तुम्हारे हाथ लगाने से फल अपवित्र हो जायेंगे। हमारे खाने योग्य नही रहेगे।"

अरण्या ने उत्तर दिया—"मुने, वेर के पेड वन के है। आपने इन्हे लगाया तो नही है। फिर यह पेड आपके कैसे हुए? रही अछूत की बात। जिस धरती पर मैं खडी हू, उसी पर आपभी खडे है। मेरे छूने से धरती भी अपवित्र हो गई है। फिर तो यह धरती भी आपके रहने के योग्य नही रह गई है।"

ऋषि वज्रनाभ खीझ उठे। उन्होने खीझ भरे स्वर मे कहा—"अस्पश्या होकर मुझसे विवाद कर रही है? मुझे जानती नही। मैं श्राप दे दगा।"

वज्रनाभ वडे तेजस्वी थे। उन्हाने कठोर तप करके सिद्धिया भी प्राप्त की थी। जो चाहते थे, सिद्धियो की शक्ति से वही हो जाता था।

पर अरण्या बिल्कुल भयभीत नही हुई, वोली—"मुने, वहुत दिनो से मैं भी इसी वन मे रहती हू। आपको क्या नही जानूगी?

आप कल्याण तो करेंगे नही। श्राप देना चाहते हैं, तो दे दीजिए।"

ऋषि वज्रनाभ क्षुब्ध हो उठे। उन्होंने कमंडल मे दाहिने हाथ की अंजलि मे जल लिया। जल को अरण्या की ओर फेंकते हुए कहा—"तुम्हारे सारे शरीर मे फफोले पड जायेंगे।"

पर तेज़ हवा के झकोरो से जल ऋषि की ही ओर लौटकर उनके शरीर पर गिर पडा। ऋषि के शरीर मे फफोले पड गये।

ऋषि क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने दूसरी बार पुन कमंडल से अंजलि मे जल लिया और सिद्धि मंत्र पढकर अरण्या की ओर फेंकते हुए कहा—"तू आग की लपटो मे जलकर भस्म हो जाएगी।"

पर मंत्र प्रेरित जल धरती पर ही गिर पडा। धरती फट गई। आग की लपटें पैदा तो हुईं, पर वे फटी हुई धरती मे समा गईं।

अरण्या मुसकरा उठी, मुसकराती हुई बोली—"मुने, क्रोध मनुष्य के मन का सबसे बडा विकार होता है। अपनी शक्तियो का अपव्यय मत कीजिए।"

ऋषि का शरीर अपमान की ज्वाला मे जलने लगा। उन्होंने अचूक अरण्या पर दो चार बाण चलाए, पर दोनों व्यर्थ गये। यह कैसी विडंबना है? ऋषि अपनी कुटिया मे जाकर पड रहे। उनका शरीर क्षोभ और दु ख की ज्वाला से जल रहा था।

सहसा ऋषि के कानो मे मधुवर्षा हुई—"मुने, क्षमा कीजिए। मुझसे भूल हुई। मैं अब बेरो मे हाथ नहीं लगाऊंगी। पत्तो को नहीं तोडूंगी।"

ऋषि ने देखा, कुटिया के द्वार पर अरण्या झुकी हुई बैठी हुई थी। उन्होंने उसकी ओर देखते हुए कहा—'तुम अछूत मेरी कुटिया के द्वार पर? तुमने कुटिया के द्वार को अपवित्र कर दिया।"

अरण्या ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह मुनि को सिर झुकाकर

उठकर चली गयी।

अरण्या ने उस दिन से बेर तोडने छोड दिये। वह भूखी रहने लगी। भूख की ज्वाला जब पैदा होती, तो वह उसे जल पीकर बुझाने का प्रयत्न किया करती, पर अरण्या की भूख की ज्वाला बुझती नही थी। ज्वाला तो ज्वाला ही होती है। जहा भी जलती है, अपना काम किये बिना नही रहती।

अरण्या के पेट की ज्वाला बाहर निकल पडी। पेड-पौधे सब सूख गये, नदियो मे पानी भी नही रहा। फल और जल के अभाव मे ऋषि-मुनि तडपने लगे, कष्टो की आग मे जलने लगे।

सयोग की बात, एक दिन देवर्षि नारद उधर से ही वीणा बजाते हुए निकले—"नारायण, नारायण, नारायण।"

ऋषियो और मुनियो ने एकत्र होकर नारद को सिर झुकाया, विनय के साथ उनसे कहा—"देवर्षि, फलों और जल के अभाव मे हम सब बहुत दु ख पा रहे हैं। फलो के पेड सूख गये हैं नदियो मे कीचड पैदा हो गया है। कृपया कोई उपाय बताइए।"

नारद सोचने लगे। उन्होने सोचते-सोचते कहा—"ऋषियो, वनवासिनी अरण्या को मनाइये। वह भूखी प्यासी तप कर रही है। जब तक उसकी भूख की ज्वाला शान्त नही होगी, तब तक आप लोगो का दु ख भी दूर नही होगा।"

ऋषि-मुनि बोल उठे—"यह कैसे हो सकता है, देवर्षि? कहा हम और कहा अरण्या? अरण्या अछूत है, हमारा जन्म ऊचे वशो मे हुआ है और हमने तप भी अधिक किये है। हम अरण्या को मनायें, यह कैसे हो सकता है?"

नारद ने उत्तर दिया—"फिर तो आप सबके दु खो को दूर करने का कोई उपाय नही है।"

नारद वीणा बजाते हुए चले गये। अरण्या की भूख की ज्वाला तेज होने लगी, अधिक तेज होने लगी। रहे-सहे वृक्ष भी सूखने

लगे, कीचड भी कठोर होने लगी। ज्वाला की गर्मी स्वर्ग मे भी जा पहुची। स्वय देवराज भी घबडा उठे।

देवराज देवताओ सहित विमान लेकर अरण्या के पास उपस्थित हुए, बोले—अरण्या, लो अमृत-पान करो। विमान पर बैठकर स्वर्ग चलो। अरण्या ने अजलि बनाकर मुह से लगा ली। देवराज उसकी अजलि मे अमृत डालने लगे। वह पीने लगी, बड़े प्रेम से पीने लगी।

ऋषि-मुनि दौड-दौड कर देवराज के पास जा पहुचे। उन्हो ने हाथ जोड जोडकर देवराज से कहा—"देवराज, हम पर भी दया कीजिये। थोडा-सा अमृत हमे भी पिला दीजिये।"

देवराज ने उत्तर दिया—"ऋषियो, स्वर्ग का यह अमृत उनके लिए है, जो सबका भला चाहते है, और जो सबको अपना समझते हैं। अरण्या अछूत है, पर सबका भला चाहने के कारण दिव्या बन गई है। यह अमृत उनके लिए नही है, जो अपने को सबसे ऊचा समझते हैं और जो दूसरो के लिए अपने हृदय मे घृणा को छोडकर और कुछ नही पालते। ऋषियो, आपका जन्म ऊचे कुलो मे हुआ है, आपने बडे-बड़े तप भी किये है, पर आपके हृदय में दूसरो के लिए घृणा और उपेक्षा को छोडकर और कुछ नही है।"

ऋषि मुनि लज्जित हो उठे। अरण्या देवराज के साथ विमान पर बैठकर स्वर्ग चली गई, देवलोक चली गई।

यह कहानी पुराणो की है, उसी देश की धरती की है, जिसकी गोद मे आज भी कोटि कोटि अछूत है, जिसकी गोद मे आज भी कोटि-कोटि भूखे और नगे वनवासी है तथा जिसकी गोद म आज भी अछूतो और वनवासियो के लिए घृणा है, उपेक्षा है।

इस देश के लोग पुराणो की इन कहानियो के मर्म को ।।
कोई कह या न कहे, पर हम यह कह बिना नही रहगे कि

जो दु ख है, जो हाहाकार है और जो असतोष है, वह अछूतो और वनवासियो की भूख की ज्वाला ही के कारण है। यदि हम देश मे शान्ति और एकता चाहते हैं, तो हमे दूसरो के मुखो के लिए अपने आप का नग्न करना पडेगा। दूसरो को आवास देने के लिए झोपडी मे रहना पडेगा। विना त्याग और बलिदान के शान्ति कैसे हो सकती है, एकता कैसे स्थापित हो सकती है ?

प्रायश्चित्त

सवेरा होते ही इन्सपेक्टर मधुमगल नहा-धोकर वर्दी पहनने लगा।

अजना बोल उठी—"तडके ही वर्दी क्यो पहन रहे हैं ? चाय पी करके जाइएगा।"

मधुमगल ने जवाब दिया—"नही, जल्दी है। चाय नही पीऊगा।"

अजना बोली—"ऐसी क्या जल्दी पडी है ? दस मिनट मे चाय बन जाएगी।"

मधुमगल बोले—"चाय तो दस मिनट मे बन जाएगी, पर पीते पिलाते आधा घटा लग जाएगा। मैं चाय नही पीऊगा। जल्दी जाना है।"

अजना बोली—"आखिर, मैं भी तो सुनू, कहा जाना है ?"

मधुमगल खीझ उठे, खीझ भरे स्वर मे बोले—"मैंने तुमसे कितनी बार कहा, मेरे आने जाने मे विघ्न मत डाला करो, पर तुम मानती ही नही। मैं पुलिस का आदमी हू। पुलिस के आदमियो को, बहुत-सी बातें अपने आदमियो से भी गुप्त रखनी पडती हैं।"

मधुमगल वर्दी पहनकर चले गये। अजना अपने कमरे में जाकर लेट गई, सोचने लगी—आजकल इन्सपेक्टर साहब [illegible] मिजाज बदल गया है। न समय से आते हैं, न समय से [illegible] समय मे चाय पीते हैं, न खाना खाते हैं। रात मे ११-११ [illegible]

कर आते हैं। न जाने इनके मिजाज मे क्या हो गया है। कुछ पूछती हू, तो बिगड उठते हैं। उस दिन रात मे जब आय थे, तो वर्दी पर खून के दाग लगे थे। मैंने जब कारण पूछा, तो बिगड गये। कुछ समझ मे नही आता।

अजना बडी देर तक पडी पडी सोचती रही। वह बहुत सी बातें सोच गई। उसने सोचा—न जाने कौन-कौन से लोग मिलने आते हैं, बहुत गुप-चुप बात करते हैं। बात करने के समय जब मैं कमरे म जाती हू, तो वे खफा हो जाते हैं। "जब मैं किसी से बात करता रहू, तो मेरे कमरे मे मत आया करो।" पहले वे ऐसा नही करते थे, कुछ ही दिनो से उनमे यह परिवतन हुआ है।

सोचते-सोचते अजना का दिमाग थक गया। उसे झपकी-सी आ गयी। उसकी आखो के सामने एक तस्वीर नाच उठी—इन्स-पेक्टर मघुमगल के हाथो मे हथकडी पडी है। वे अभियुक्त के रूप मे न्यायालय मे खडे हैं। उन पर कोई बहुत बडा मुकदमा चल रहा है।

अजना की झपकी टूट गयी। वह अपने आप ही बोल उठी—अरे, यह कैसा बुरा स्वप्न है ?

अजना चारपाई से उठ पडी। वह इधर-उधर के कामो मे मन बहलाने लगी। उसने निश्चय किया कि आज जब इन्सपेक्टर साहब आयेंगे, तो उनसे जाने बिना नही रहूगी। भले ही वह नाराज हो जाये, पर पूछ कर रहूगी कि वे रोज़-रोज देर से क्यो आते है, कहा रहते है और क्या करते हैं ? पर इन्सपेक्टर नही आय, अजना प्रतीक्षा ही करती रही। खाना तो बनाया, पर चिन्ता के कारण खाया नही गया। बिना खाये ही रह गई। राह देखते-देखते १० बज गये, पर इन्सपेक्टर की आहट तक नही मिली।

अजना आकुल हो उठी। सवेरे के स्वप्न ने उसके मन के साहस को तोड दिया। उसके मन मे रह-रहकर दुश्चिन्ताय पैदा

होने लगी—कही सवेरे का स्वप्न सच न हो जाए।

अजना से जब रहा नही गया, तो उसने अपनी सहेली मालती को फोन मिलाया। मालती शहर कोतवाल रघुवरदयाल की पत्नी थी।

अजना ने जब इन्सपेक्टर के न आने की बात कही, तो मालती बोली—"अभी तक कोतवाल साहब भी नही आये। सुना है, आतकवादियो से कही मुठभेड हो गई है। कुछ आतकवादी पकडे गये हैं, कुछ मारे गये है। मैं भी बहुत घबडा रही हू। साहब के बारे मे कुछ पता नही चल रहा है।"

अजना ने रिसीवर रख दिया। वह कमरे मे जाकर लेट गई, सोचने लगी—हो सकता है, इन्सपेक्टर भी मुठभेड मे कोतवाल के साथ ही हो।

ग्यारह-साढे-ग्यारह बज रहे थे। जजीर खटखटा उठी। अजना ने उठकर दरवाज़ा खोला, तो देखा एक अपरिचित के साथ मधुमगल थे।

मधुमगल अजना की ओर देखे बिना उस मनुष्य के साथ अपने कमरे मे चले गये और दरवाज़ा बन्द करके धीरे-धीरे बात करने लगे।

मधुमगल ने कहा—"अर्जुन सिंह, बडा बुरा हुआ, कुछ साथी पकड लिये गये।"

अपरिचित मनुष्य बोला—"हा, बडा बुरा हुआ। गोली लगने से रघुवरदयाल की मृत्यु हो गई। अब तो पुलिस के लोग पता लगाने के लिए एडी चोटी का पसीना एक कर देगे। भेद खुलने से रहेगा नही, हम लोग भी पकडे जायेगे। पकडे जाने पर जेल या फासी अवश्य होगी। अब तो एक ही उपाय है। चलो, विदेश चले। एअर इंडिया मे मेरा साला अफसर है। टिकट का बडी सरलता से हो जायेगा।"

मधुमगल ने कहा—"ठीक कह रहे हो। इसके अतिरिक्त अब बचने का कोई उपाय नही है। चलो जल्दी करो।"

और इसपेक्टर मधुमगल अपरिचित मनुष्य के साथ अपने घर से बाहर निकल गये।

अजना को अब समझने मे देर नही लगी कि इसपेक्टर मधुमगल रात मे देर से क्या आते थे? वह समझ गई, उसका पति आतकवादियो से मिला हुआ है और आज उसने मुठभेड मे कोतवाल रघुवरदयाल की हत्या कर दी है! बेचारी मालती! आततायियो ने उसे बेवा बना दिया।

अजना अपने हो आप सूने कमरे मे बोल उठी—"इसपेक्टर मेरे पति तो हैं, पर देश-द्रोही हैं। वे आतकवादियो से मिल कर देश को मरघट बना रहे हैं। रोज़ ही हत्याए, रोज ही लूट। धरती खून से रग रही है। वे पाप करके प्राण बचाने के लिए विदेश मे मुह छिपाना चाहते हैं, पर मैं उन्ह ऐसा नही करने दूगी। मैं बेवा बन जाऊगी, पर देश-द्रोही की पत्नी बनकर नही रहूगी।"

अजना ने शीघ्र ही एस० पी० को फोन मिलाया—"रघुवरदयाल के हत्यारे एयर इडिया के विमान से विदेश भाग जाना चाहते है। उन्हे पकडने के लिए शीघ्र ही हवाई अड्डे पर धावा कीजिये। हत्यारो मे इसपेक्टर मधुमगल भी है।"

मधुमगल गिरफ्तार हुए या नही, उन पर मुकदमा चलाया गया या नही और उन्हे जेल की सजा मिली या फासी की—इनमे से एक भी बात अजना के कानो मे नही पडी क्योकि उसने फोन रखने के पश्चात ही अपनी ही गोली से अपनी हत्या कर ली थी।

अजना ने अपने मुह से तो इसपेक्टर मधुमगल के सम्बन्ध मे

कुछ नही कहा, पर उसके वलिदान ने सव कुछ कह दिया। देश द्रोही मधुमगल का आचरण अजना को पसद नही था। पाप तो पति ने किया, पर उस पाप का प्रायश्चित्त वीर पत्नी अजना ने किया। काश! अजना की तरह सभी देश-द्रोहियो की पत्निया उनके घृणित कामो का विरोध करती।

फूल एक ही किस्मे जुदा-जुदा हैं

मौलवी इलाहीबख्श ने एक पाठशाला खोल रखी थी। उनकी पाठशाला मे हिन्दू, मुसलमान और सिख सभी के छोटे-छोटे बच्चे पढा करते थे। पाच रुपये महीने लेते थे। बडे प्रेम से पढाया करते थे।

एक लम्बी-चौडी कच्ची दालान थी। बाहर बरगद का बहुत बडा पेड था। केवल बरसात को छोडकर मौलवी साहब बाकी मौसमो म बरगद के पेड के नीचे ही पढाया करते थे। मौलवी साहब थे तो मुसलमान, पर सभी धर्मो से प्रेम करते थे। पक्के देश-भक्त थे। गदर की कहानिया बडे प्रेम से सुनाया करते थे। कहा करते थे उनके बाबा ने स्वतन्त्रता के सिपाहियो की ओर से अग्रेजो से लडाई लडने मे बडी बहादुरी दिखायी थी।

दिन के तीन बज रहे थे। मौलवी साहब पाठशाला बन्द करके अपने घर जा रहे थे। उन दिनो नगर मे दगो की आग भडकी हुई थी। इसलिए मौलवी साहब तीन ही बजे पाठशाला बन्द कर दिया करते थे।

मौलवी साहब के घर का रास्ता एक मुसलिम मुहल्ले से होकर जाता था। उस मुहल्ले मे मुसलमान अधिक रहते थे, पर तीन-चार घर हिन्दुओ के और एक-दो घर सिखो के थे।

मौलवी साहब जब मुसलिम मुहल्ले के बीच मे पहुचे, तो चीख-पुकार से रुक गये। उन्होने देखा, कुछ शरारती नौ जवान एक

हिन्दू के घर मे आग लगाकर, उसकी जवान लडकी को बलपूर्वक खीचकर ले जा रहे हैं। लडकी उसी तरह चीख रही है जिस तरह कसाई के हाथ मे पडने पर गाय चीखती है। मुहल्ला शरीफ मुसलमानो का था। लडकी की चीख मुसलमान स्त्री-पुरुषो के कानो मे पड रही थी। सब अपने-अपने छज्जे पर खडे होकर तमाशा देख रहे थे, पर नीचे उतरकर लडकी को छुडाने का साहस किसी मे नही हो रहा था।

मौलवी साहब की रगो मे बिजली दौड गई। वे जवान लडको को डाटते हुए बोल उठे—"*क्या करते हो ?*"

जवान लडको ने चकित विस्मित दृष्टि से मौलवी साहब की ओर देखा। उनमे से एक मौलवी साहब की ओर देखता हुआ बोला—"हज़रत, आप तो मुसलमान हैं। यह लडकी काफिर की है—हिन्दू की। आप इसे छोड देने के लिए क्यो कह रहे हैं ?"

मौलवी साहब बोल उठे—"मैं मुसलमान हू इसीलिए तो छोड देने के लिए कह रहा हू। मैं खुदा के नाम को नापाक करने नही दूगा। लडकी हिन्दू की है तो क्या हुआ ? हिन्दू और मुसलमान दोनो एक ही खुदा के बन्दे है।"

एक दूसरा नौजवान गुस्से मे आ गया। वह गुस्से की आवाज़ मे बोला—'मौलवी साहब जाइये, अपना रास्ता लीजिये, नही तो ।"

मौलवी साहब को भी क्रोध आ गया। वे आपे मे बाहर हो गये। जवान लडको की ओर झपटते हुए बोले—"नही तो क्या, नही तो क्या ?"

मौलवी साहब लडकी का हाथ पकडकर अपनी ओर खीचने लगे। लडके कई थ, मौलवी साहब पसीने पसीने हो रहे थे। लगता था, ज़मीन चूम लेंगे।

पर इसी समय मौलवी साहब की सहायता के लिए कुछ और

जवान आ गये। वे उनके पुराने शागिद थे, जो उसी मुहल्ले मे रहते थे।

जवानो ने मौलवी साहब को छुडाकर अलग कर दिया। लडकी का हाथ अब भी शरारती युवको के काबू मे था। मौलवी साहब बोल उठे—"लडकी को भी छुडाओ नही तो मैं जान दे दूगा।"

शागिर्द पक्के शागिद थे। वे मौलवी साहब की जान बचाने के लिए मरने-मारने के लिए तैयार हो गये, फिर तो शरारती युवक लडकी को छोडकर भाग खडे हुए। मौलवी साहब लडकी को साथ लेकर अपने घर की ओर चल पडे, क्योकि लडकी का घर जल चुका था और उसके माता-पिता भी आग की भेंट हो चुके थे।

मौलवी साहब का घर हिन्दुओ के मुहल्ले मे था। वे जब अपने घर के पास पहुचे, तो देखा कुछ शरारती युवको ने उनके घर को घेर रखा है। वे जोर ज़ोर से नारा भी लगा रहे है—"जय बजरगबली की, जय बजरगबली की।"

मौलवी साहब उन युवको को देखकर अपने आप ही बोल उठे—"यहा भी वही दश्य है, पर उसका उल्टा है। वहा मुसलमान युवको ने हिंद के घर को घेर रखा था और यहा हिन्दू युवको ने मुसलमान के घर को घेर रखा है। या खुदा, इन पागलो का क्या हो गया है?"

सहसा एक युवक की दृष्टि मौलवी साहब पर जा पडी। वह जोर से चिल्ला उठा—"मौलवी साहब, मौलवी साहब!"

कुछ युवको ने दौडकर मौलवी साहब को घेर लिया। वे सहमे तो नही थे, पर मौन थे। लडकी पहले तो बगल मे थी, पर जब युवको ने मौलवी साहब को घेर लिया तो वह सामने जाकर खडी हो गई, सिहनी की तरह गरजती हुई बोली—"यह मेरे बाबा हैं। तुम सब इन्हे नही मार सकते। इन्हे मारने के पहले

तुम लोगो को मुझे मारना होगा।"

एक युवक बोल उठा—"तुम हिन्दू और मौलवी साहब मुसलमान। यह तुम्हारे बाबा किस तरह हुए?"

लडकी ने पूरी कहानी सुना दी। वह पूरी कहानी सुनाकर बोली—"क्या अब भी तुम लोग इन्हे मारोगे? क्या अब भी तुम लोग इनके घर को जलाओगे?"

युवक लज्जित हो गये। उन्होने मौलवी साहब के पैरो को छूते हुए कहा—"मौलवी साहब, हमे मालूम नही था। हमे क्षमा कर दीजिये। आप मनुष्य नही, देवता है।"

मौलवी साहब ने युवको के मस्तक पर हाथ रखते हुए कहा—"हम तुम्हे तब क्षमा करेगे, जब तुम लोग एकता और शान्ति रखने मे हमारा साथ दोगे।"

युवको के नेता ने मौलवी साहब का हाथ अपने हाथ मे लेकर कहा—"हम अवश्य आपका साथ देगे।"

मौलवी साहब युवको और अपनी पाठशाला के बालको की प्रभात-फेरिया निकालने लगे। वे गली गली मे, सडक सडक पर गाने लगे—

> फूल एक ही, किस्मे जुदा-जुदा हैं,
> इन्सान एक ही है, एक ही खुदा है।
> भाई है हिन्दू-मुसलिम सिख, देश एक ही है,
> रगत अलग-अलग है, परमेश एक ही है।
> लडना खुदा के नाम पर, भारी गुनाह है,
> दोजख भी न देता, उनको पनाह है।

मौलवी साहब के गीत का कुछ प्रभाव हुआ या नही, पर एकता और शान्ति के प्रचारक के रूप मे उनका नाम अवश्य अमर हो गया। काश, आज के लोग भी मौलवी साहब की ही तरह एकता और शान्ति का प्रचार करते।

भोला भगत का मंदिर

प्रभात के पश्चात का समय था। दस साढे-दस वज रहे थे। मैंने जब भोला भगत के मदिर मे प्रवेश किया, तो सामने ही एक बडे पट्ट पर मेरी दृष्टि पडी। पट्ट पर गोल-गोल सुदर अक्षरो मे लिखा था—जो लोग छुआछूत मे विश्वास करते हो और जो ऊच-नीच के भेदभाव को मानते हैं, वे इस मदिर मे भगवान का दर्शन न करें।"

पट्ट पर लिखी पक्तियो को पढकर मैं खडा हो गया, मन-ही-मन सोचने लगा—"यह कैसा अद्भुत मदिर है। इस प्रकार का पट्ट तो किसी भी मदिर मे नही लगा रहता। जो छुआछूत मे विश्वास रखता हो वह ।"

मैं स्तब्ध सा रह गया। कुछ क्षणो तक खडा खडा पट्ट की ओर देखता रहा, फिर मन ही-मन सोचने लगा—मदिर के भीतर भगवान का दर्शन करने के लिए जाऊ या न जाऊ ? यद्यपि छुआ-छूत मे मेरी आस्था नही है, पर मन मे ऊच-नीच का भेद तो है ही। यद्यपि वह भेद जातिगत नही है, पर धन और पदगत भेद तो है ही। भेद चाहे जिस प्रकार का हो, भेद ही कहलायेगा। मुझे इस पट्ट के अनुसार मदिर के भीतर दर्शन के लिए नही जाना चाहिए।"

मैं पीछे की ओर लौट पडा। दो चार ही कदम चला था कि पीछे से किसी ने कधे पर हाथ रखा।

मुडकर देखा, तो ६०-६५ वर्ष के एक पुरुष थे। नगे वदन थे, कमर मे लगोटी लगाये हुए थे। सिर पर वडे-वडे वाल थे, आखो मे चमक थी। मेरी ओर देखते हुए बोले—"बिना दर्शन किये ही लौटे जा रहे थे ?" मैंने उत्तर दिया—"हा, बिना दर्शन किये हुए ही लौट रहा हू। वह देखिये, पट्ट पर क्या लिखा हुआ है ?"

वृद्ध पुरुष ने पट्ट की ओर देखे बिना ही कहा—"तो क्या आप छुआछूत और ऊच नीच के भेद मे विश्वास रखते है ?"

मैंने उत्तर दिया—"हा, कुछ ऐसी ही वात है। पट्ट पर लिखे वाक्यो के अनुसार मैं अपने आप को मदिर के भीतर जाने का अधिकारी नही समझता।"

वृद्ध पुरुष वोल उठे—"आप भी कैसे विचित्र मनुष्य हैं! मदिर मे रोज ही हजारो स्त्री-पुरुष दर्शन के लिए आते हैं, दर्शन करके चले जाते हैं। मैं पूछता हू, क्या वे सब के सब समहृदय के होते है? क्या उनके भीतर छुआछूत के प्रति आस्था नही होती और क्या वे ऊच नीच के भेद को नही मानते ? मेरी सलाह मानिये, तो आप भी सब की तरह मदिर मे जाकर दर्शन कर लीजिये।"

मैंने उत्तर दिया—"मैं औरो की बात नही जानता। मैं अपनी बात कहता हू। मैं मदिर मे भी भगवान के सामने कपट करू—मुझसे ऐसा नही हो सकता। मेरे मन मे ऊच-नीच का भेद है। मैं उसे छिपा नही सकता।"

मैं अपनी बात समाप्त करके चलने लगा, पर उन्होने मुझे पकड लिया, कहा—"मैं आपको जाने नही दूगा। आप जैसे सत्य-निष्ठ मदिर मे कहा आते है ? मैंने इसीलिए तो यह पट्ट लगा रखा है। बडे दु ख की बात है, हमारे समाज मे मदिर मे भी कपट करते है, भगवान से भी मन को छिपाते है। पट्ट पर लिखी पक्तियो को पढने पर भी भगवान का दर्शन करते है। मैं उनसे पूछता हू, तो वे यही उत्तर देते हैं, उनके मन मे छुआछूत के प्रति विश्वास

नही है।"

वृद्ध पुरुष मौन होकर सोचने लगे। कुछ क्षणो के वाद सोचते-सोचते पुन बोले—"समाज मे छल, कपट और प्रवचना का राज्य है। जिसे देखो, वह कहता कुछ और है, करता कुछ और है। इसी के फलस्वरूप आज भी छुआछूत है ऊच-नीच का भेद है। जो लोग छुआछूत दूर करने की वात कहते है, सच तो यह है कि वे भी छुआछूत मानते हैं, वे भी मन मे ऊच नीच का भेद रखते है।"

वृद्ध मनुष्य की वातें मुझे बडी प्यारी लगी। मैंने उनकी ओर प्रश्न किया— 'क्या में आपका परिचय जान सकता हू ?"

वृद्ध मनुष्य ने उत्तर दिया—' हा, क्यो नही जान सकते ? मेरा नाम भोला भगत है, मैं जाति का चमार हू। सेना मे नौकर था। जब पेंशन हुई तो गाव मे रहने लगा। भगवान से कुछ नाता जुट गया था। पूजा पाठ करने लगा, कथा वार्ता मे दिन विताने लगा, पर गाव के लोगो से यह सब नही देखा गया। वे उत्पात मचाने लगे, कहने लगे—तुम चमार हो। न तो पूजा कर सकते हो और न कथा वार्ता कर सकते हो।

"मैं ऊब गया, अपनी पेंशन बेचकर सरकार से रुपया लिया और उस रुपये से इस मदिर को वनवाकर खडा किया। पट्ट इस-लिए लगाया है कि देखू कितने लोग ऐसे है, जो छुआछत में विश्वास नही रखते। पर, आश्चर्य की वात तो यह है वे यही कहते हैं कि उनके मन मे छुआछूत नही है। फिर भी चारा ओर छुआछूत है चारो आर ऊच नीच का भेद है।"

भोला भगत की वातो ने मेरे मन को मुग्ध कर लिया। मैंने उनके चरणो को छूते हुए कहा—"आप धन्य है, आप पूजनीयो के भी पूजनीय हैं।"

भोला भगत ने मुझे मदिर मे ले जाकर दर्शन कराया और

अपने हाथो से विश्वम्भर का प्रसाद दिया।

मैं घर जाकर सोचने लगा—"भोला भगत की वातो मे कितनी मार्मिकता थी। हमारे देश और समाज के लोग सचाई की वात करते है, पर सच नही बोलते। अहिंसा की बात करते है, पर गोश्त खाते हैं। ईमानदारी की वात तो करते है, पर दूसरो को धोखा देते है। ईश्वर की पूजा तो करते है, पर लाभ अपने सबधियो को पहुचाते हैं और समता की वात तो करते ही है, पर अपने निवास के लिए अच्छे बगले ही खोजते है। देश के लोगो मे जब तक मन की यह चोरी रहेगी, शान्ति और एकता कैसे स्थापित हो सकती है, कैसे स्थापित हो सकती है?"

मैं अब भी बराबर यही सोचा करता हू, यही सोचा करता हू।

चन्दन

दोपहर के पश्चात् का समय था। चदन बाजरे के खेत की मेड पर बैठा हुआ गुनगुना रहा था—

"सारे जहा से अच्छा, हिन्दोस्ता हमारा।
हम बुलबुले है उसकी, वह है चमन हमारा॥"

पचीस छब्बीस वष का चदन शरीर से हट्टा-कट्टा सुदृढ अगो वाला था। हाथ मे लाठी होती तो शेर को भी पछाडने का दम रखता था। हृदय का शुद्ध, अच्छे विचारो वाला था।

सहसा चदन को ऐसा लगा कि कोई बाजरे के खेत मे घुस रहा है। पौधे हिल रहे थे, खडखड की आवाज भी आ रही थी।

चदन उठकर खडा हो गया। सोचने लगा—अवश्य कोई खेत मे घुसा है। तो कोई जानवर है या कोई मनुष्य है?

चदन लाठी सभाल कर खेत मे घुस पडा, बडे-बडे पौधो को हटाता हुआ आगे बढने लगा। कुछ दूर जाने पर उसने जो कुछ देखा, उससे वह सन्नाटे मे आ गया।

खेत के बीच मे एक लबा-चौडा मनुष्य उतान पडा था, कमीज और जांघिया पहने था। कमीज मे रक्त भी लगा था, बिल्कुल बेहोश था। शरीर मे जगह-जगह चोट के निशान भी थे।

चदन हाथ की लाठी रखकर, आहत मनुष्य के पास बैठ गया,

जानने का प्रयत्न करने लगा कि जीवित है या मर गया है ?

चदन को यह जानकर सतोष हुआ कि अभी मरा नही है, सास आ-जा रही है।

चदन को चिन्ता हुई, इसे कैसे बचाया जाय। कैसे इसे आराम पहुचाया जाय ?

चदन कुछ और मनुष्यो को बुला लाया और उनकी सहायता से आहत को अपने घर ले गया।

चदन ने आहत मनुष्य की सेवा सुश्रूषा की, उसे होश म लाने का प्रयत्न किया। जब वह होश मे आया, तो चदन ने उससे पूछा—"कैसी तबीयत है ?"

घायल मनुष्य ने एक बार चदन की ओर देखा और फिर उस कमरे की ओर देखा, जिसमे वह चारपाई पर लेटा हुआ था। वह चन्दन की ओर देखता हुआ धीमे स्वर मे बोल उठा—"अब तो तबीयत कुछ-कुछ अच्छी है।"

घायल मनुष्य ने अपनी बात समाप्त करके आखे बन्द कर ली। वह मन-ही मन सोचने लगा—'यह क्या माजरा है ? वह यहा कैसे पहुचा ? यह आदमी कौन है ? वह स्मरण करने लगा। उसे कुछ कुछ याद आया—भरी हुई बस चली जा रही है। वह सहसा हाथ मे पिस्तौल लेकर अपने साथियो के साथ खडा हो गया। पिस्तौल दिखाकर यात्रियो को लूटने लगा। जिस किसी ने आखे दिखाई, उसे गोली भी मार दी। फिर सिपाही नेकीराम को बगल मे दबाकर बस से उतर पडा। नेकीराम अपने को बडा हेकड समझता था, पर जब बस से उतरा, तो पुलिस दल के साथ एस० पी० साहब आ गये। उन्होने पीछा किया। नेकीराम को छोडकर भाग खडे हुए। कई बार ठोकर खाकर गिरे, पर फिर भी भागते रहे। भागते-भागते बाजरे के खेत मे छिप गये। फिर आगे क्या हुआ, क्या हुआ ।'

चन्दन आहत मनुष्य को सोचता हुआ देखकर बोल उठा—"क्या सोच रहे हो? चिंता छोडकर आराम करो। यहा कोई दु ख नही होगा। पूर्ण स्वस्थ होने पर चले जाना।"

घायल मनुष्य ने चन्दन की बात सुनी तो, पर कुछ उत्तर नही दिया। चुप-चाप चारपाई पर पडा रहा। चन्दन उसे आराम पहुचाने के प्रयत्न मे जी-जान से लगा रहा।

चन्दन अभी कुवारा था। उसके कुटुम्ब मे वह, उसका वडा भाई और उसकी पत्नी थी। वड भाई का नाम नेकीराम था। वह पुलिस मे नौकर था। कस्बे के थाने मे रहता था। सप्ताह मे दो-तीन वार घर आया करता था।

उसी दिन सध्या के पश्चात का समय था। आठ-नौ वज रहे थे। नेकीराम घर आ गया। जब खाने के लिए बैठा, तो चन्दन से बोला—आज जान बच गई। बस पर ड्यूटी थी। न जाने कैसे आतकवादी भी बस पर चढ गये। जब बस निजन स्थान मे पहुची तो आतकवादी पिस्तौल निकालकर खडे हो गये, यात्रियो को लूटने लगे। उन्होने दो-तीन यात्रियो को गोली भी मार दी। बस से नीचे उतरने लगे, तो मुझे भी पकड लिया। वे मेरा अपहरण करना चाहते थे, पर सयोग की बात तो यह हुई कि न जाने कहा से पुलिस दल के साथ एस० पी० साहब आ गये। उन्होने आतकवादियो का पीछा किया। वे मुझे छोडकर भाग खडे हुए। फिर भी एस० पी० साहब की गोली से दो-तीन आतकवादी आहत होकर गिर पडे। भगवान की कृपा से मेरे प्राण बच गये। यदि वे मेरा अपहरण कर ले जाते, तो अवश्य मुझे मार डालते।

नेकीराम ने अपनी बात समाप्त करते हुए, लम्बी उसास ली। चन्दन बोल उठा—"दुष्ट आतकवादी! मुझे मिलते, तो हड्डी पसली तोड डालता, पर बडे भैया, सरकार इन आतकवादियो का सफाया क्यो नही करती?"

नेकीराम ने उत्तर दिया—"सफाया तो करना चाहती है, पर जयचन्दो के कारण कर नही पाती। हमारे देश मे जयचंद बहुत हैं। जिस प्रकार जयचद ने राज के लोभ मे मुहम्मदगोरी को निमन्त्रित किया था, उसी तरह बहुत से लोग रुपये के लोभ मे पड कर आतकवादियो को छिपाये रहते है या अवसर पडने पर छिपा लेते हैं। जो होगा, देखा जायेगा, यहा का क्या हाल-चाल है ?"

चन्दन ने उत्तर दिया—"यहा का हाल-चाल तो सब ठीक है बडे भैया, पर आज एक बडी अद्भुत घटना घट गई। मै दोपहर बाद बाजरे के खेत की मेड पर बैठा था। मुझे ऐसा लगा, मानो कोई खेत मे घुस रहा हो। मैंने जाकर देखा, तो एक लम्बा-चौडा मनुष्य आहत अवस्था मे बेहोश पडा था। मैं उसे उठाकर घर लाया। कुछ दवा-दारू की, तो होश में आ गया। मैं नही जानता, वह कौन है, पर इस समय ऊपर के कमरे मे सो रहा है।

नेकीराम चकित विस्मित हो उठा, बोला—"बाजरे के खेत मे आहत पडा था ? तुम उसे घर उठा लाये ? वह ऊपर के कमरे मे सो रहा है। चलो, मुझे भी तो दिखाओ।"

चन्दन नेकीराम को ऊपर के कमरे मे ले गया। आहत मनुष्य बडे आराम से सो रहा था। नेकीराम ने उसे देखकर जेब से कुछ फोटो निकाले। फिर चन्दन को नीचे ले जाकर कहा—"यह तो आतकवादियो का सरदार अर्जुनसिह है। इसी ने तो मेरा अपहरण किया था। तुम ऐसा करो, इसे आराम से सोने दो। मैं थाने जा रहा हू। शीघ्र ही पुलिस को लेकर आ जाऊगा। इसे गिरफ्तार कर लूगा। कैसी भगवान की माया है ! खूनी शेर अपने आप ही लोहे के पिजडे मे बन्द हो गया है।"

नेकीराम चन्दन को समझाकर शीघ्र ही घर से निकल गया। चन्दन बैठकर सोचने लगा—यह आतकवादियो का सरदार अर्जुनसिह है। इसने कितने ही आदमियो की हत्या की होगी,

कितने ही घरो को लूटा होगा। आज मेरे भाई को पकडकर ले जाता, तो उसे भी मार डालता, पर आहत है। मेरे बाजरे के खेत मे छिपा था। मैंने उसे घर लाकर उसकी दवा-दारू की। भगवान ने यह सब काम मुझसे क्यो कराया ? यह काम कराने के पश्चात् अब यह कराना चाहते हैं कि अब मैं उसे गिरफ्तार करा द। नही, जिसे दूध पिलाया जाय, उसे विष नही देना चाहिए। सतो का कथन है, विष पिलाने वालो को अमृत ही पिलाना चाहिए।

चन्दन ऊपर के कमरे मे जा पहुचा—और आहत मनुष्य को जगाता हुआ बोला—"अर्जुनसिंह, तुम पहचान लिये गये हो। आज बस मे तुमने सिपाही नेकीराम का अपहरण किया था न ! वे मेरे भाई हैं। अभी थोडी देर पहले यही थे। वे थाने पुलिस बुलाने गये हैं। तुम उनके आने के पहले ही यहा से भाग जाओ। मैंने तुम्हे शरण दी है। तुम्ह गिरफ्तार नही करा सकता।"

अर्जुनसिह विस्मयभरी दृष्टि से चदन की ओर देखता हुआ उठने का प्रयत्न करने लगा, पर उठ नही सका। चोट से उसके पैर वेकार हो गये थे।

अर्जुनसिह मन-ही-मन सोचने लगा, कुछ क्षणो तक सोचता रहा, फिर बोला—"नौजवान, तुम मनुष्य नही हो, देवता हो। तुम यह जान करके भी कि मैंने तुम्हारे भाई का अपहरण किया था, तुम मुझे गिरफ्तारी से बचा रहे हो। तुमने मेरी आखे खोल दी। मैं अब तक बहुत पाप कर चुका हू, पर अब नही करूगा। यहा से भागकर नही जाऊगा। जा भी नही सकता, पैर बेकार हो गये हैं। ईश्वर की यही इच्छा है कि मैं गिरफ्तार हो जाऊ और गिरफ्तार होकर आतकवादियो का सारा भेद पुलिस को बताकर प्रायश्चित्त करू। देखो, मेरी जेब मे बहुत से रुपये हैं, उन्हे ले लो।"

चदन बोला—' अर्जुनसिह, तुम मेरे अतिथि हो। मैं तुम्हारे रुपये नही ले सकता। मैंने जो कुछ किया है और जो कुछ कर रहा

हू, वह इसलिए कि हम-तुम दोनो मनुष्य हैं। दोनो का एक ही धर्म है—मानवता।"

पाठक, अर्जुनसिंह बन्दी बना लिया गया। उसने आतकवादियो का सारा भेद पुलिस को बताकर प्रायश्चित्त किया। सरकार ने चदन की वीरता और उसकी मानवता पर प्रसन्न होकर उसे पुरस्कार देना चाहा, पर चदन ने उस पुरस्कार को भी नही लिया। उसने कहा—मैंने जो कुछ किया है, पुरस्कार के लिए नही किया है। किया है, देश की शान्ति और एकता के लिए।

चौकीदार

चौबीस-पचीस वर्ष का महीप सरकारी चौकीदार था। कई गावो मे चौकीदारी करता था। सावला रग, शरीर से सुदढ था। लाठी कधे पर रखकर चलता, तो ऐसा लगता, मानो बहुत बडा शासक हो। जाति का पासी था। निमल चरित्र का था। बाल-बच्चा कोई नही था, केवल अकेला दम परोपकार के लिए सदा प्राण देने को तैयार रहता था।

दिन मे या तो लम्बी तानकर सोता था, या थाने मे हाजिरी बजाता था। रात मे गावो मे घूम घूमकर पहरा दिया करता था। गर्मी हो, बरसात हो या जाडा हो—महीप पहरा देने मे सुस्ती नही करता था। उसके पहरे के कारण चोरो और डकैतो की नही चलती थी।

यो तो महीप सदा प्रसन्न रहता था, पर इधर कई दिनो से उसके मन मे चिन्ता की आग जल रही थी। उसे खाना पीना बिल्कुल अच्छा नही लगता था। ऐसा लगता था, जसे उसके मन मे किसी चिन्ता की आग सुलग रही हो। महीप कई गावो मे पहरा देता था, उन गावो के एक-एक आदमी को जानता था। वह कमलपुर के प्रेमसिह को भी जानता था। उनका पुत्र सेना मे नौकर था। मेजर के पद पर था। नाम प्रभुदयालसिंह था। वह प्रभुदयाल को भी जानता था। वे छुट्टी पर आए हुए थे। थे तो मेजर, पर बडे मिलनसार थे। छोटे बडे सबसे मिलते थे।

सध्या के पश्चात् का समय था, आठ-साढे आठ वज रहे थे। महीप मेजर साहव के घर जा पहुचा। मेजर साहव कमरे मे अपने बच्चो के साथ बैठे हुए थे। उ है युद्ध के मैदानो की कहानिया सुना रहे थे।

महीप ने झुककर मेजर साहव को सलाम किया। मेजर साहव उसके सलाम को लेते हुए वोले—"आओ जी चौकीदार। बैठो, क्या हाल है?"

महीप नीचे फर्श पर बैठने लगा, पर मेजर साहव ने कहा—"नही, फर्श पर मत बैठो। सामने वाली कुर्सी पर बैठ जाओ। सरकार के नौकर तुम, और सरकार का ही नौकर मैं। मेरे और तुम्हारे मे भेद कैसा?"

महीप कुर्सी पर बैठ गया। उसकी आखो मे वडी उदासी थी। मेजर साहव ने उसे कई वार देखा था। पर वैसी उदासी उन्होने उसकी आखो मे कभी नही देखी थी। मेजर साहव महीप की ओर देखते हुए वोल उठे—"तुम तो वडे खुशमिजाज आदमी थे। आज वहुत उदास दिखाई पड रहे हो। क्या वात है?"

महीप ने चिन्ता भरे स्वर मे उत्तर दिया—"कुछ ऐसी ही वात है, मेजर साहव। कई दिनो से वडी चिन्ता मे पड गया हू। दूर करने का वहुत उपाय सोचता हू, पर कुछ सूझ नही पडता। आपके पास इसीलिए आया हू, कदाचित् आप कोई राह वतायें।'

मेजर साहव महीप की ओर देखने लगे, देखते-देखते वोले—"कहो क्या वात है? सुनने पर यदि कोई राह समझ मे आई, तो अवश्य वताऊगा।"

महीप कहने लगा—"मेजर साहव, जिस गाव मे मैं रहता हू, उसमे एक सिख स्त्री भी रहती है, विधवा है। मेहनत मजदूरी करके अपना निर्वाह करती है। एक जवान लडकी को छोडकर और कोई नही है। लडकी वडी खूवसूरत है। गाव के

अलीरज़ा का बेटा मुहम्मद उसके पीछे पडा है। वह कहता है, अपनी बेटी का विवाह मेरे साथ कर दो। नही तो रात मे उठा ले जाऊगा।

"सरदारनी मेरे पास आई थी मेजर साहब! सिसक सिसक कर अपना दुखडा कह रही थी। वह अपनी पुत्री का विवाह मुहम्मद के साथ नही करना चाहती। उसने गाव के कई आदमियो को अपना दुखडा सुनाया, पर जमीदार के बेटे से मोर्चा लेने का साहस किसी मे नही हुआ। मेजर साहब, सरदारनी के आसुओ ने मेरे हृदय को बेध डाला है। पर समझ मे नही आता, क्या करू ?"

मेजर साहब विचारो मे डूब गये। कुछ देर तक सोचते रहे, फिर बोले—"मेरी राय मे सरदारनी को समझाओ। लडकी का विवाह तो कही-न-कही करेगी ही। मुहम्मद जमीदार का बेटा है, लडकी को चाहता भी है। उसके साथ विवाह कर देगी, तो लडकी बडे आराम से रहेगी। रहो जाति और मजहब की बात। आज के ससार मे इसे कौन महत्त्व देता है ? आजकल तो लोग सुख और धन के ही पीछे भागते हैं।"

महीप ने उत्तर दिया—"मेजर साहब, सरदारनी किसी भी मूल्य पर लडकी का विवाह मुहम्मद के साथ करने को तैयार नही है। उसकी बेटी रूपा स्वय भी मुहम्मद के साथ विवाह नहीं करना चाहती। मेजर साहब, मा-बेटी दोनो अपनी सुरक्षा चाहती है।"

मेजर साहब सोचने लगे सोचते-सोचते बोले—"यह तो बडी कठिन समस्या है। रूपा की सुरक्षा का अर्थ है मुहम्मद से सघर्ष करना। इसके लिए कौन तैयार होगा! मुहम्मद मुसलमान है, अल्पसख्यक समुदाय का है। सरकार जितना अल्पसख्यको की सुनती है, उतना और किसी की भी नही सुनती। यदि झगडा-

फसाद हुआ, तो सरकार मुहम्मद का ही पक्ष लेगी।"

महीप बोला—"तो इसका तो अर्थ यह है मेजर साहब, कि अन्याय को होने दिया जाय। नही, मेजर साहब! मै ऐसा नही होने दूगा। सरदारनी विधवा है, गरीब है, तो क्या हुआ ? जैसी मेरी अपनी मा है, वैसी ही वह भी है। रूपा अपनी बहन के समान है। मैं जीते जी उसकी इज्जत लुटने नही दूगा। यदि वह स्वय उसके साथ गाठ जोडना चाहती, तब तो और बात थी, पर जब वह नही चाहती, तो उसके साथ जबरदस्ती नहीं होने दूगा।"

मेजर साहब बोल उठे—"तो तुम क्या करोगे ? तुम अकेले जमीदार के लडके से कैसे लडोगे ?"

महीप बोला—"मैं जानता हू मेजर साहब, मैं अकेला हू, पर मैं न्याय के लिए लड्गा, सचाई के लिए लड्गा। मैं अपनी जान गवा दूगा, पर अन्याय नही होने दूगा। आपसे एक प्रार्थना है। अपना पिस्तौल कुछ दिनो के लिए मुझे दे दीजिए। विश्वास रखिये, मैं उसे लौटा दूगा।"

मेजर साहब चौकीदार के विचार पर मुग्ध हो उठे। फौजी आदमी थे। उनकी रगों मे जोश पैदा हो गया। उन्होने महीप की पीठ ठोकते हुए कहा—"तुम बडे बहादुर और आत्म-त्यागी पुरुष हो। मैं दो महीने तक यहा रहूगा। तुम दो महीने तक मेरी पिस्तौल अपने पास रख सकते हो।"

मेजर साहब ने अपनी पिस्तौल महीप को दे दी।

उसके पश्चात् जो घटना घटी, वह इस प्रकार है—जमीदार का बेटा मुहम्मद रूपा को उठाकर ले जाना चाहता था, पर महीप ने उसका रास्ता रोक दिया। दोनो ओर से गोलिया चली। महीप और मुहम्मद—दोनो आहत होकर गिर पडें, सदा के लिए सो गये। मृत्यु ने दोनो को अपनी गोद मे सुलाया था, पर महीप सोया था न्याय के लिए और मुहम्मद सोया था अन्याय के लिए।

एक ही मृत्यु सबका गला दबाती है, पर काम और आचरण सबके अलग-अलग होते हैं।

हमें महीप की तरह केवल न्याय और सचाई के लिए ही मरना चाहिए, अन्याय, अशान्ति और लूट-पाट के लिए नहीं।

काश, महीप का ही आदर्श सामने रखकर लोग आचरण करते!

□□